RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म.प्र./भोपाल/261/2015-17 प्रकाशन तिथि 28 अक्टूबर 2017

चकमक

बाल विज्ञान पत्रिका अक्टूबर 2017

गोपी बिल्ली

जब हम खातव तालुका में लालगुन में रहते थे तो हमने एक बिल्ली पाली थी। उसका नाम गोपी था। उसका रंग सफेद और ग्रे था। वो बहुत ही सुन्दर थी। उसके पंजे और दाँत बहुत नुकीले थे। और उसकी आँखें चमकीली और मुलायम बालोंवाली एक पूँछ थी। उसे दूध और मछली बहुत पसन्द थी। वह छोटी लेकिन बहुत मजबूत थी।

मूल्य ₹ 50

बारिश

पार्थ
बारह वर्ष, आनन्द निकेतन डेमोक्रेटिक स्कूल, भोपाल, म. प्र.

मेरे बचपन की बारिश यूँ ही निकल गई
घर की खिड़की से देखा पर यूँ ही निकल गई
पेड़ों को देखा और पेड़ से उछल गई
मेरे बचपन की बारिश यूँ ही निकल गई
बारिश गई और मैं बड़ा हो गया हूँ
बादलों का ज़ोर नहीं था खुद पे
लगता आज ज़ोर से बरसेगी बारिश
चकमती बिजली गरज़ते बादल
कर रहे थे मनमानी
बारिश हुई और डूबी नाव
चप्पू चला और इंसान डूब गया

चित्र : कनक शशि

बाल विज्ञान पत्रिका

चकमक

अंक 373 अक्टूबर 2017

इस अंक में

2 बारिश - पार्थ
4 बैल और व्यापारी - कुमकुम रॉय
6 मेरा पन्ना
7 फ़िल्म समीक्षा - केदी - सजिता नायर
10 मेरा पन्ना
11 चींटी की आँखों के तारे - सुशील शुक्ल
12 शरद ऋतु का आकाश - सी एन सुब्रह्मण्यम्
14 गुड़हल - मंगलेश डबराल
15 पलटवार किताबें - टुलटुल
16 तुम भी बनाओ
17 सूरजमुखी - रुद्राशीष चक्रवर्ती
21 गाँव और कलकत्ता - हारून राशिद,
22 नाचघर- केशों में केसर वन- प्रियम्वद
27 गूलर - नीना भट्ट
31 माथापच्ची
32 पढ़ाई का गणित- राजिन्दर हंस गिल
35 मेरा पन्ना
36 वलरमदि का रास्ता
38 बच्चों की एक मुट्ठी में आ सकने वाले ....- विनोद कुमार शुक्ल
42 मेरा पन्ना
43 चित्र पहेली - कविता तिवारी
44 गोपी बिल्ली - निरंजन ढोक

आवरण चित्र
कनक शशि

सम्पादन
सुशील शुक्ल
शशि सबलोक

वितरण
झनक राम साहू

विशेष सहयोग - इकतारा बाल साहित्य केन्द्र

सहायक सम्पादक
सी एन सुब्रह्मण्यम्
कविता तिवारी
सजिता नायर
भवानी शंकर
रुद्राशीष चक्रवर्ती

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी

सहयोग
कमलेश यादव
ब्रजेश सिंह

डिज़ाइन
दिलीप चिंचालकर
कनक शशि

एक प्रति :	50.00
वार्षिक :	500.00
तीन साल :	1350.00
आजीवन :	6000.00

सभी डाक खर्च हम देंगे।

चन्दा (एकलव्य के नाम से बने) मनीऑर्डर/चैक से भेज सकते हैं। एकलव्य भोपाल के खाते में ऑनलाइन जमा करने के लिए विवरण- बैंक का नाम व पता - स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, महावीर नगर, भोपाल
खाता नम्बर - 10107770248
IFSC कोड - SBIN0003867
कृपया खाते में राशि डालने के बाद इसकी पूरी जानकारी accounts.pitara@eklavya.in पर ज़रूर दें।

एक़लव्य
ई-10, शंकर नगर, बीडीए कॉलोनी, शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र. 462 016, फोन: (0755) 4252927, 2550976, 2671017
फैक्स: (0755) 2551108, e mail - chakmak@eklavya.in, e mail - circulation@eklavya.in, www.chakmak.eklavya.in, www.eklavya.in

बौद्ध परम्परा के अनुसार महात्मा बुद्ध ने इस जन्म से पहले अनेक बार और अनेक रूप में जन्म लिया था। इन जन्मों में उन्हें 'बोधिसत्त' कहा जाता था। प्राचीन बौद्ध संकलन (जातक-अत्थ वण्णना) जिन्हें आमतौर पर जातक कथाएँ कहते हैं, में उनके इन जन्मों की रोचक बातें हैं।

इस कॉलम में हम ऐसी ही पुरानी कहानियाँ पेश करते हैं...

चित्र : शुभम लखेरा

बैल और व्यापारी

कुमकुम रॉय

बहुत पहले की बात है जब ब्रह्मदत्त वाराणसी का राजा था। उस वक्त बोधिसत्त ने एक बछड़े के रूप में जन्म लिया। बछड़े के मालिक एक बूढ़ी औरत के मकान में किराए से रहते थे। मकान छोड़कर जाते समय उन्होंने किराए के बदले वो बछड़ा बूढ़ी औरत को दे दिया। उस औरत ने बछड़े को अपने बेटे की तरह पाला। उसे अच्छा खिलाया-पिलाया। आसपास के लोग उसे 'नानी का कलुआ' पुकारने लगे थे।

उम्र बढ़ने के साथ-साथ बोधिसत्त का रंग गहराने लगा। वह गाँव की गाय-भैंसों के साथ चरता और पंचशील का पालन करते हुए सबके साथ रहता था। बलशाली होते हुए भी वह नरम दिल था। कभी-कभी गाँव के बच्चे उसके सींग पकड़ लेते या उसके कान खींचने लगते। कोई उसकी झालर से लटक जाता, कोई उसकी पूँछ खींच लेता, तो कोई उसकी पीठ पर चढ़ बैठता।

एक दिन बोधिसत्त ने सोचा, "मेरी माँ बहुत दुखी हैं। बहुत तकलीफें उठाकर वह मुझे पाल रही हैं। क्यों न मैं कुछ पैसे कमाकर उनके बोझ को कम करूँ?" यह सोचकर उसने काम तलाशना शुरू कर दिया।

कुछ ही दिनों बाद एक सार्थवाह का बेटा पाँच सौ बैलगाड़ियाँ लेकर नदी के पास आया। नदी किनारे की ढाल बहुत खड़ी थी। उन गाड़ियों में जुते बैल, गाड़ियों को खींचकर नदी पार नहीं करवा पा रहे थे। फिर उसने पाँच सौ जोड़े बैलों को एक ही गाड़ी में जोता। लेकिन वे उस एक गाड़ी को भी पार नहीं करवा पाए।

बोधिसत्त उसी जगह पर अन्य गायों के साथ चर रहे थे। सार्थवाह का बेटा गाय-बैलों को देखकर ही समझ जाता था कि कौन कैसा है। उसने झुण्ड पर नज़र डाली। उसकी गाड़ी खींचने लायक कोई बैल उसे नहीं दिखा। पर बोधिसत्त को देखते ही वह समझ गया कि यही उसका काम कर सकता है। उसने चरवाहों से पूछा, "यह किसका बैल है? मैं इसे जोतकर अपनी गाड़ियों को पार ले जाना चाहता हूँ। मैं उसे पूरा मेहनताना देने को भी तैयार हूँ।" चरवाहे ने कहा, "जोत लो। इसका कोई मालिक नहीं है।"

सार्थवाह के बेटे ने बोधिसत्त की नाक में रस्सी डालकर गाड़ी खिंचवाने की कोशिश की, पर एक भी कदम आगे नहीं बढ़ाया। उन्होंने शायद सोच लिया था कि 'जब तक वेतन तय नहीं होता मैं कहीं नहीं जाऊँगा।' उनके मन की बात को समझकर सार्थवाह के बेटे ने कहा, "अगर आप इन पाँच सौ गाड़ियों को पार कर देंगे, तो मैं आपको प्रति गाड़ी दो सिक्के यानी कुल एक हज़ार सिक्के दूँगा।"

अब बोधिसत्त को ज़बरदस्ती ले जाने की ज़रूरत नहीं रही। वे खुद ही गाड़ियों की ओर चलने लगे।

सार्थवाह के सेवकों ने उन्हें एक गाड़ी के साथ जोत दिया। उन्होंने आसानी से उसे सूखी ज़मीन पर पहुँचा दिया। इस तरह एक-एक कर पाँच सौ गाड़ियाँ पार हो गईं।

काम पूरा होने के बाद सार्थवाह के बेटे ने एक थैले में प्रति गाड़ी एक सिक्के के हिसाब से पाँच सौ सिक्के डालकर उसे बोधिसत्त के गले में लटका दिया। बोधिसत्त ने सोचा, "यह आदमी तय समझौते के हिसाब से पैसे नहीं दे रहा है। ठीक है! मैं भी इसको छोड़ूँगा नहीं।" और सबसे आगे खड़ी गाड़ी का रास्ता रोककर खड़े हो गए। सार्थवाह के सेवकों ने बहुत कोशिश की, पर उन्हें हटा नहीं पाए। तब सार्थवाह के बेटे ने सोचा, "मैंने कम पैसे दिए हैं। शायद यह बात इसे समझ आ गई है।" तब उसने एक थैली में एक हज़ार सिक्के रखकर उसे बोधिसत्त के गले पर बाँध दी और कहा, "लीजिए, आपका पूरा पैसा मैंने चुका दिया।"

बोधिसत्त वे एक हज़ार सिक्के लेकर अपनी माँ से मिलने चल दिए। "नानी का कलुआ अपने गले में क्या बाँधकर ले जा रहा है?" कहते हुए गाँव के बच्चों ने उनका पीछा किया। उन्हें भगाकर बोधिसत्त अपनी माँ के पास पहुँचे।

पाँच सौ गाड़ियाँ खींचकर वे थक गए थे। उनकी आँखें लाल हो गई थीं। माँ ने उनके गले में लटके एक हज़ार सिक्के देखकर कहा, "बेटा, यह सब तुझे कैसे मिला?"

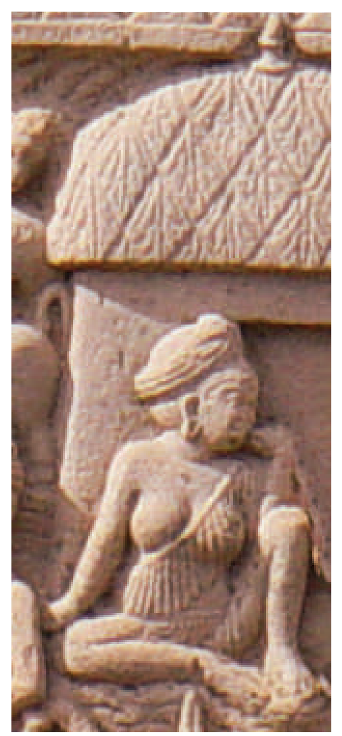

तब चरवाहे ने पूरी कहानी सुनाई। सुनकर बूढ़ी अम्मा ने कहा, "मैंने कब तुझे मेहनत करने या पैसे कमाने के लिए कहा? तूने क्यों खुद को इतना परेशान किया?" फिर उसने बोधिसत्त को गरम पानी से नहलाया। उनके पूरे शरीर पर तेल की मालिश की और उनके खान-पान का इन्तज़ाम किया।

उन दोनों का बाकी जीवन उसी तरह बीता। कहा जाता है-

कलुआ के सहारे के बिना पार होना मुश्किल है। पर उनकी मदद मिले तो पाँच सौ गाड़ियाँ भी नदी पार हो सकती हैं।

सार्थवाह या बड़े व्यापारी, जो एक से दूसरी जगह बैलगाड़ियों से सामान बेचने या खरीदने लाते-ले जाते थे।

पंचशील – बौद्ध साहित्य में इसका ज़िक्र मिलता है। इस सन्दर्भ में पाँच शील या पाँच गुणों के अर्थ है- झूठ न बोलना, किसी को नहीं मारना, चोरी न करना, कामनाओं से दूर रहना और नशीले पदार्थों का सेवन न करना। इस कहानी में कौन-कौन से शीलों के बारे में बताया गया है और कैसे?

मेरा पन्ना

एक मज़ेदार घटना

जब मैं तीसरी कक्षा में पढ़ती थी तब गर्मियों की छुट्टियों में मैंने और मेरी दोस्त अपूर्वा ने तैराकी की क्लास जाना शुरू किया। हम दोनों तैरना सीखना चाहते थे लेकिन हम दोनों के ही मन में पानी को लेकर डर था।

एक दिन जब मैं पूल के पास में खड़ी थी अपूर्वा आई और उसने अचानक से मुझे पूल में धक्का दे दिया। डर के मारे मैं रोने-चिल्लाने लगी। हमारे कोच ने मुझे पूल से बाहर निकाला। मैं अपूर्वा से बहुत गुस्सा हुई और मैंने उसे भी पानी में धक्का देने का ठान लिया। मैं बस मौके के इन्तज़ार में थी।

एक दिन मैंने देखा कि अपूर्वा पूल के पास खड़ी है। मैंने उसे पानी में धक्का देने का मन बना लिया। तो मैं उसे धक्का देने के लिए तेज़ी-से उसकी ओर दौड़ी। लेकिन अचानक ही वो वहाँ से हट गई और मैं एक बार फिर पानी में गिर गई। मैं ज़ोर-से चिल्लाई। मेरा प्लान काम नहीं आया। हर कोई मुझ पर हँस रहा था। मैं यह मज़ेदार घटना कभी भी भूल नहीं सकती।

–समीक्षा दीक्षित, दसवीं,
प्रगत शिक्षण संस्थान फलटण, महाराष्ट्र

फूलोंवाली बेल

ऊपर-ऊपर चली गई यह
फूलोंवाली बेल।
हरे-भरे पत्तों पर देखो
धूप-छाँव का खेल।
उड़ती आती तितली इस पर
हवा दौड़कर आती
पत्ती-पत्ती को छू-छूकर
छू मन्तर हो जाती।
हवा धूप तितली फूलों का
चलता रहता खेल।
ऊपर-ऊपर चली गई यह
फूलोंवाली बेल।

–शहज़ाद आलम, चौथी,
डीपीएस पटना, बिहार

–रिया सोनी, पाँचवीं, उदयपुर, राजस्थान

"इस्ताम्बुल में,
बिल्ली बिल्ली नहीं है,
उससे कहीं ज़्यादा है...
बिना बिल्लियों के इस्ताम्बुल
अपनी रूह खो बैठेगा।"

समीक्षा - सजिता नायर

फिल्म

केदी

फिल्म निर्देशक - सेयदा तोरूँ
फिल्म निर्माता - सेयदा तोरूँ
एवं चार्ली वूप्पेर्मान
छायांकन - चार्ली वूप्पेर्मान एवं
एल्प कोर्फली
मूल संगीत - किरा फोंटेना

"केदी" फिल्म तुर्की भाषा में है। इसे अँग्रेज़ी उपशीर्षक के साथ यहाँ देखा जा सकता है।

(https://www4.fmovies.io/watch/kedi.html)

फिल्म "केदी" इस्ताम्बुल और बिल्लियों के अनूठे रिश्ते की कहानी है। इसकी निर्देशक सेयदा तोरूँ का बचपन इस्ताम्बुल में गुज़रा था। ग्यारह साल की उम्र में वे अपने परिवार के साथ अमान, जॉर्डन होते हुए न्यूयॉर्क में बस गई थीं। उनकी आगे की पढ़ाई यहीं हुई। इस दौरान सेयदा को कहीं भी बिल्लियाँ नहीं दिखीं जैसे इस्ताम्बुल में। शायद इसीलिए सेयदा इस्ताम्बुल और बिल्लियों के रिश्ते को "केदी" की मार्फत दुनिया के सामने लाना चाहती थीं ।

केदी बिल्लियों की ज़िन्दगियों के साथ-साथ इस्ताम्बुल शहर और जानवरों के साथ वहाँ के रहवासियों के रिश्ते को भी दर्शाती है। ये रिश्ते इंसान और जानवरों दोनों की ज़िन्दगी को कितना हसीन बना सकते हैं!

सेयदा और उनकी टीम ने फिल्म बनाने के दौरान बिल्लियों के साथ कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं की। अगर बिल्ली कैमरे को देखकर नहीं रुकती तो वे मान जाते कि बिल्ली उन्हें शूटिंग की इजाज़त नहीं दे रही है। और वे उसे अपने हाल पर छोड़ देते। इस फिल्म की सारी बिल्लियाँ फिल्म में अपनी मर्ज़ी से हैं। फिल्म का छायांकन में कई नए तरीके अपनाए गये है। बिल्लियों के करीबी दृश्य रिमोट कार कैमरे से लिए गए हैं और कुछ दृश्य हैलिकॉप्टर कैमरे से लिए गए हैं।

इस्ताम्बुल तुर्की का सबसे बड़ा और जाना-माना शहर है। यह एकमात्र शहर है जो दो महाद्वीपों (एशिया और यूरोप) में फैला है। इसीलिए सदियों से यहाँ देश-विदेश के बड़े-बड़े व्यापारियों का डेरा लगा रहता था। दुनिया के कोने-कोने से जहाज़ यहाँ रुकते थे। इसकी झलक इस्ताम्बुल की विविध संस्कृति में देखी जा सकती है। व्यापारी अकसर जहाज़ों में आते थे। खाने को चूहों से बचाने के लिए वे इनमें बिल्लियों को पालते थे। व्यापारी जब शहर में उतरते तो बिल्लियाँ भी उनके साथ उतर जातीं। शहर में चलते-चलते वे इतना आगे निकल जातीं कि अकसर जहाज़ उनसे छूट जाया करते। इस तरह इस्ताम्बुल में कई नस्ल की बिल्लियाँ आ गईं। जब उस्मानी साम्राज्य (Ottoman Empire) का पहला नाला बनाया गया तो नगरवासियों को बड़े-बड़े चूहों का खतरा सताने लगा। इस

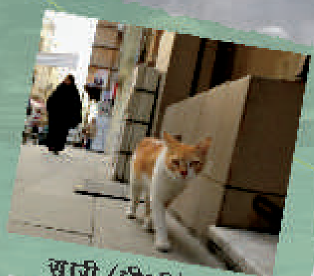

सारी (पीली)

बेंग्यु (अमर)

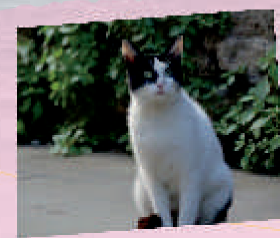

सिकोपात (पागल)

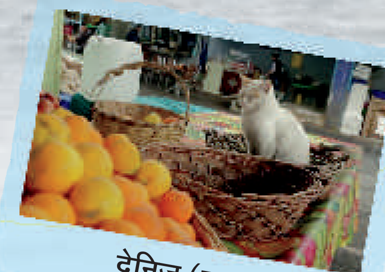

देनिज़ (सागर)

फिल्म में हम इस्ताम्बुल को इन्हीं सात बिल्लियों की नज़रों से देखते हैं।

परेशानी का हल उन्हें बिल्लियों में दिखा। और वे बिल्लियाँ पालने लगे।

वैसे तो सारी और बेंग्यु दोनों के रहन-सहन तौर-तरीके काफी भिन्न हैं, पर जब बात बच्चों की आए तो दोनों का एक अलग ही रूप देखने को मिलता है। सिकोपात को अपनी आज़ादी से समझौता करना पसन्द नहीं है। वह वही करती है जो करना उसे पसन्द है। देनीज़ उस बच्चे की याद दिलाती है जो एक जगह टिक कर ज़्यादा देर नहीं बैठ सकती। लोगों से घुलना-मिलना उसे भाता है। असलान उस पुलिसवाले की तरह है जो चोर को पकड़ने के लिए हमेशा गश्त लगाता रहता है। या जैसे शिकारी अपने शिकार की तलाश में बैठा हो। गाम्सीज़ का नाम पहले दूधवाला रखा गया था क्योंकि वह सिर्फ दूध पीने के लिए ही आता था। पर फिर उसकी खुशनुमा तबीयत को देखते हुए उसे गाम्सिज़ नाम दिया गया। ड्यूमान जिस रेस्तरां में रहता है, वहाँ का मालिक बिल्लियों को बिलकुल नापसन्द करता था। पर ड्यूमान ने उसे बिल्लियों से प्यार करना सिखाया। मालिक को अचरज होता कि कैसे उसके या किसी और के बोले बिना ही ड्यूमान को पता चल जाता था कि उसे रेस्तरां के अन्दर नहीं आना है। शुरू से ही भूख लगने पर वह खिड़की को खटखटा दिया करता था।

वर्षों साथ रहने से इस्ताम्बुल के लोगों का बिल्लियों से एक अनूठा रिश्ता बन गया है। कुछ लोगों के लिए बिल्लियाँ उनकी दोस्त हैं जो उन्हें जीने के लिए, मुश्किलों का सामना करने के लिए प्रोत्साहित करती हैं। कुछ लोगों के लिए बिल्लियाँ उनके बच्चों की तरह हैं, तो कुछ लोग बिल्लियों से सकारात्मक ऊर्जा पाते हैं। वे बिल्लियों को अपना प्रेरणा स्रोत मानते हैं। फिल्म में एक महिला का मानना है कि बिल्लियों से महिलाओं को खासतौर से सीख लेनी चाहिए। जैसे, बिल्लियाँ खुद का बहुत ख्याल रखती हैं। उनका चलने का तरीका, खुद को हमेशा साफ रखना, किसी पर निर्भर न होना, अपनी मर्ज़ी का मालिक होना, जैसी आदतें उन्हें बाकी जानवरों से अलग करती हैं।

"मुझे बिल्लियों में स्त्रीत्व दिखता है, ऐसा आत्मविश्वास भरा स्त्रीत्व तो आजकल की कई महिलाओं में भी नहीं दिखता..."

इस्ताम्बुल में सड़क किनारे जगह-जगह बिल्लियों के खाने-पीने का सामान रखा जाता है।

"यह कप बिल्लियों और कुत्तों के लिए है। अगर आप नहीं चाहते कि अगले जन्म में आप पानी के लिए तड़पें तो इनको न छुएँ।"

फिल्म के कुछ सीन आप कभी भूल नहीं सकते। जैसे बिल्ली का एक ऊँची इमारत से नीचे देखना मानो वो कुछ गहरी सोच में हो। एक और दृश्य में दो बिल्लियाँ आमने-सामने बैठी हैं। मानो दो दोस्त आपस में बात कर सुकून के कुछ पल गुज़ार रहे हों। यहाँ की किसी भी बिल्ली का कोई एक मालिक नहीं होता। बहुत सारे लोग मिलकर इनका ख्याल रखते हैं।

असलान (शेर)

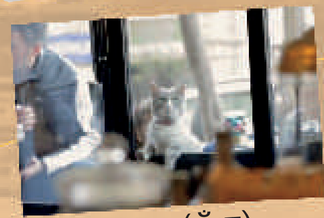

ड्यूमान (धुँआ)

और गाम्सीज़ (बिन्दास)

फिल्म निर्देशक- सेयदा तोरूं

"सड़कों पर रह रही बिल्लियों को परेशानी की तरह देखना और परेशानी की तरह उनको सम्भालना तो सामान्य होगा। वहीं अगर हम उनके साथ रहना सीख लें, तो शायद उनकी परेशानी दूर करते-करते हम अपनी परेशानियाँ भी दूर कर लें।"

इस्ताम्बुल का बढ़ता शहरीकरण बिल्लियों की ज़िन्दगी पर असर डाल रहा है। इस्ताम्बुल विश्व में सबसे ऊँची इमारतों वाले शहर की सूची में दसवें स्थान पर आता है। छोटे-छोटे मोहल्लों और बाज़ारों को खत्म कर ऐसी इमारतें बनती गईं तो बिल्लियों का ख्याल रखने के लिए कोई नहीं बचेगा। और जो कोई ख्याल रखने के लिए नहीं बचेगा तो बिल्लियाँ भी शायद इस्ताम्बुल का हिस्सा न रहें। लोगों को डर है कि जिस रफ्तार से सड़कें गाड़ियों से भर रही हैं और ऊँची-ऊँची इमारतें बन रही हैं, सड़कें बिल्लियों के लिए खतरा बन सकती हैं।

फिल्म हमें अहसास दिलाती है कि कैसे जानवर इन्सानों को संवेदनशील बनाते हैं। फिल्म में एक महिला अपने किसी भी करीबी की मौत के सच को स्वीकार नहीं कर पाती है। पर अपनी सबसे खास बिल्ली की मृत्यु के दुख से उबरने के लिए सड़क पर रह रही सभी बिल्लियों का ख्याल रखने लगती है। फिल्म की निर्देशक मानती हैं कि बिल्लियों की वजह से ही वे अपने बचपन में अकेलेपन से लड़ पाईं। इस्ताम्बुल के लोग बिल्ली को एक जानवर की तरह नहीं देखते। किसी भी रिश्ते में एक-दूसरे की इज्ज़त करना और एक-दूसरे को समझना बहुत महत्वपूर्ण होता है। ठीक ऐसा ही रिश्ता है इस्ताम्बुलवासियों और बिल्लियों के बीच। जितनी इज़्ज़त और महत्व इस्ताम्बुली बिल्लियों को देते हैं उतनी ही इज़्ज़त और महत्व बिल्लियाँ वहाँ के लोगों को देती हैं।

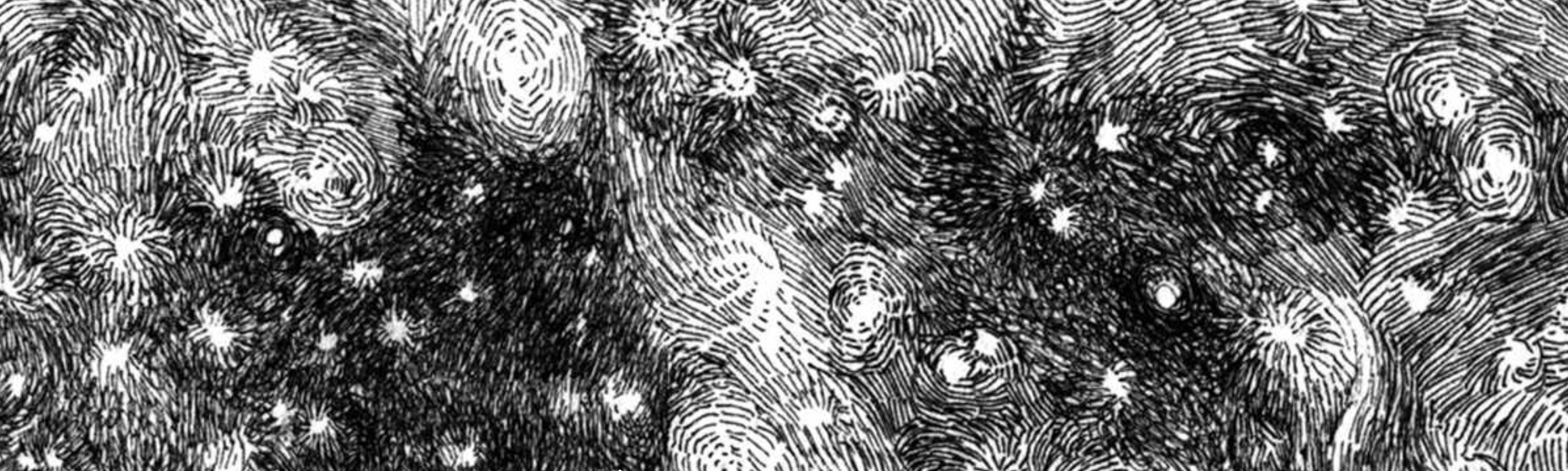

चींटी की आँखों के तारे

सुशील शुक्ल

मैं तारे को रोशनी से कम दूरी से ज़्यादा पहचानता। तारे एक रोशनी की बूँद की तरह दिखते। हालाँकि वे एक समूची दुनिया होते।

ज़मीन पर भी एक आसमान होता। ज़्यादातर लोग बिलकुल पास रहकर भी तारे की तरह बने रहते। तारे की तरह उनका एक भरा पूरा संसार होता। पर वे एक बूँद भर दिखते। अपरिचित। दूर। रात में लोग करोड़ों मील दूर के तारे को पहचान लेते। ध्रुव तारे से लोग दिशा जानते-फिरते। पर दिन के उजाले में अनेकों लोग तारे बने रहते। मैं शहर में घूमता और इन अनेकानेक तारों से दिशा समझने की कोशिश करता।

कहीं एक चींटी दिख जाती। कभी-कभी लगता कि चींटी सचमुच इतनी छोटी है या कि हमारी नज़रन्दाज़ी की वजह से वह इतनी छोटी नज़र आती है। दूर। जैसे कि तारे नज़र आते हैं। मैं उसके एकदम पास चला जाता। मैं चींटी की आँख के तारे को देखना चाहता। पर चींटी के आँख के तारे को देखने निकली मेरी नज़र समूची चींटी से कम न देख पाती। कभी-कभी मुझे लगता कि कहीं चींटी मुझसे पूछ न ले कि तुम इतनी बड़ी-बड़ी आँखों से आखिर देखते क्या हो? मैं चींटी को आँख मूँदकर देखने लगता।

मैं चींटी को देखता। दिन में उसकी छोटी-सी छाया उसके साथ चलती। कभी-कभी इतना छोटा हो जाने का मन करता कि एक चींटी की छाँव में सो सकूँ। मैं एक इतनी छोटी चीज़ होना चाहता जिसके लिए चींटी की परछाई रात जैसी हो। और इस रात में एक पूरे जीवन का सपना देखता। फिर इसी रात का एक दिन होता। चींटी का दिन।

चित्र : कैरन हेडॉक

शरद ऋतु का आकाश

सी एन सुब्रह्मण्यम्

संस्कृत साहित्य में छह ऋतुओं का ज़िक्र होता है। इनमें शरद और वसन्त बहुत खास हैं। मौजूदा कैलण्डर के हिसाब से शरद ऋतु अक्टूबर-नवम्बर में होती है। जब बारिशें खत्म हो गई होती हैं और ठण्ड शुरू नहीं हुई होती है। इन महीनों में आकाश एकदम साफ होता है। बारिश में धुला-धुला। आसमान दिन में एकदम नीला और रात में स्याह काला दिखता है। रात में तारामण्डल साफ देखे जा सकते हैं। इन दिनों चाँद बेहद खूबसूरत दिखता है। इसलिए तो इसे शरद चन्द्र कहते हैं। और चाँदनी खीर जैसी दूधिया।

शरद का आकाश तो खूबसूरत होता ही है, शरद की धरती, हवा, पेड़, बेलें और चिड़ियाँ भी कम निराली नहीं होतीं। चटक सफेद काँस के फूल, फूलते खुशबूदार धान के खेत, उन पर बहती मन्द शीतल हवा...।

अगर किसी ने इन बदलती ऋतुओं का सबसे ज़्यादा आनन्द लिया तो वह कवि कालिदास ही हैं। कालिदास ने ऋतुसंहारम् में शरद ऋतु का छब्बीस पंक्तियों में वर्णन किया है। ये प्रकृति अवलोकन के बेजोड़ नमूने हैं।

वे वर्षा से शरद के बीच के संक्रमण की ओर ध्यान दिलाते हैं और बताते हैं कि इन दिनों नदी-नालों में पानी की रफ्तार धीमी हो जाती है। कुटज, कदम्ब, अर्जुन का फूलना खत्म हो जाता है और फूलने की बारी सप्तपर्णी, मालती और शेफाली या पारिजात की होती है। फूलों से लदे इन पेड़-पौधों की तेज़ खुशबू कोसों तक फैल जाती है। आसमान में बगुलों के उड़ने और ज़मीन पर मोरों के नाचने का मौसम खत्म और हंसों, बत्तखों की अठखेलियों का मौसम शुरू हो जाता है...।

चित्र : दिलीप चिंचालकर

कालिदास की नज़रें बार-बार शरद के आसमान पर टिक जाती हैं। वे कहते हैं कि आसमान से बादल छँट जाते हैं। चित्र-विचित्र तारा समूहों के बीच चाँदनी बिखेरनेवाला चन्द्रमा। उनकी नज़रें ज़मीन पर उतरती हैं तो उन्हें स्थिर पानीवाले तालाब दिखते हैं। इनमें रात को सफेद कुमुदिनियाँ खिलती हैं और राजहंस तैरते हैं। कवि को लगता है कि आकाश और तालाब एक-दूसरे की सुन्दरता को आपस में साझा कर रहे हैं। शरद की ठण्डी हवाएँ दोनों के बीच बहती रहती हैं। ऋतुसंहारम् की दो पंक्तियों को देखते हैं-

स्फुटकुमुदचितानां राजहंसस्थितानां
मरकतमणिभासा वारिणा भूषितानाम्।
श्रियमतिशयरूपां व्योम तोयाशयानां
वहति विगतमेघं चन्द्रतारावकीर्णम्।।(21)

जगमगाते तारों और चाँद से जड़े मेघों से मुक्त शरद का आकाश।

मरकत मणि सी (गहरी हरी-नीली) आभा वाले तालाबों की अतिशय सुन्दरता को ओढ़े हुए है जिनमें सफेद राजहंस चारों ओर छितरी, खिली कुमुदिनियों के बीच तैर रहे हैं।

शरदि कुमुदसंगाद्वायवो वान्ति शीता
विगतजलदवृन्दा दिग्विभागा मनोज्ञाः।
विगतकलुषमम्भः श्यानपंका धरित्री
विमलकिरणचन्द्रं व्योम ताराविचित्रम्।।(22)

शरद में कुमुदिनियों के बीच खेलते हुए बहती हैं शीतल हवाएँ,

घने बादल के झुण्डों से रिक्त दिशाएँ मनोहारी हैं

पानी मैल रहित और धरती सूखी

आकाश व्याप्त है चाँद की निर्मल किरणों और तारों के विचित्र रूपों से।

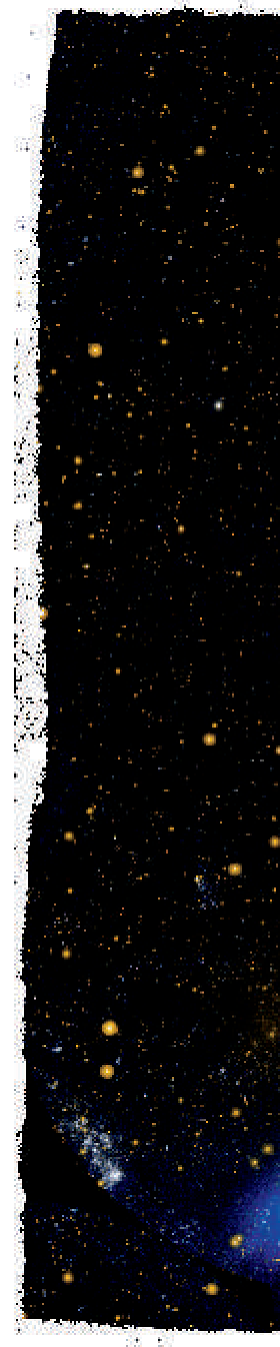

अक्टूबर और नवम्बर का आकाश

आसमान देखनेवालों के लिए शरद खास महत्व का होता है। चाँद, ग्रह, तारे और विभिन्न तरह के पुँज जो गर्मी में धूल के कारण और बारिश में बादलों के कारण छुपे रहते हैं, अब साफ-साफ दिखने लगते हैं। इस मौसम में हमें सूरज उगने से पहले शुक्र ग्रह (वीनस) दिखेगा, पूर्व में सूरज के उगने की जगह के ठीक ऊपर। सूर्यास्त के बाद कुछ समय के लिए आँख गड़ाकर देखो तो बुध (मरकुरी) दिख सकता है। साथ में बृहस्पति (जुपिटर) और शनि (सैटर्न) भी। वैसे सबसे चमकीला तो बृहस्पति होगा जो सूर्यास्त के तुरन्त बाद पश्चिम दिशा में थोड़े समय के लिए दिखता है। यह अक्टूबर के अन्त में दिखना बन्द कर देगा और फिर नवम्बर में सुबह दिखेगा। नवम्बर 13 के आसपास सुबह सूर्योदय से एक घण्टा पहले शुक्र और बृहस्पति को एक-दूसरे से सटे हुए देखा जा सकता है। यह एक अद्भुत घटना है।

दीपावली अमावस्या को मनाई जाती है। इस साल यह 18-19 अक्टूबर को पड़ी। इससे दो-चार दिन पहले सुबह के आसमान में सूर्योदय से एक घण्टा पहले मंगल और शुक्र एक के नीचे एक होंगे। बारिश के दुबले-पतले चाँद के नीचे मंगल और उसके नीचे शुक्र को देखना अनूठा नज़ारा होगा।

शरद ऋतु के आसमान में सबसे रोमांचक चीज़ है - एंड्रोमीडा आकाशगंगा (जिसे देवयानी निहारिका भी कहते हैं)। यह रात दस बजे के बाद उत्तर-पूर्व दिशा में पेगसस नामक एक चौकोर तारामण्डल के साथ लगे तारा समूह के

एंड्रोमीडा आकाशगंगा चित्र : इन्टरनेट

पास दिखेगा। यह तारा समूह दो सींग जैसा दिखता है। हमारा सौर मण्डल 'मिल्की वे' नाम की आकाशगंगा में स्थित है। एंड्रोमीडा आकाशगंगा हमसे 25 लाख प्रकाश वर्ष दूर है। (एक प्रकाश वर्ष लगभग साढ़े नौ हज़ार लाख किलोमीटर है)। हमारी आकाशगंगा के अलावा सामान्य आँखों से दिखनेवाली यह एकमात्र आकाशगंगा है। यानी यह सबसे पुरानी और सबसे दूर की जगह है जिसे नंगी आँखों से दूरबीन वगैरह के इस्तेमाल के बगैर देखा जा सकता है। हमें जो एंड्रोमीडा दिखती है वह लगभग 25 लाख साल पुरानी है। तभी तो वहाँ से रोशनी को हम तक पहुँचने में इतना अधिक समय लगता है।

एंड्रोमीडा आकाशगंगा एक तारे की तरह नहीं बल्कि रोशनी के हलके पुंज जैसी दिखती है। अमावस्या या बगैर चाँद की रातों में, सही जगह पर ध्यान दें तो इस निहारिका को देखा जा सकता है। दूरबीन से इसका खूबसूरत सर्पिल आकार भी देख सकते हैं।

गुड़हल

मंगलेश डबराल

मुझे ऐसे फूल अच्छे लगते हैं
जो दिन-रात खिले हुए न रहें
शाम होने पर थक जाएँ और उनींदे होने लगें
रात में अपने को समेट लें सोने चले जाएँ
आखिर दिन-रात मुस्कराते रहना कोई अच्छी बात नहीं
गुड़हल ऐसा ही फूल है
रात में वह बदल जाता है, गायब हो जाता है
तुम देख नहीं सकते कि दिन में वह फूल था
अगले दिन सूरज आने के साथ वह फिर से पंख फैलाने
चमकने रंग बिखेरने लगता है
और जब हवा चलती है तो इस तरह दिखता है
जैसे बाकी सारे फूल उसके इर्द-गिर्द नृत्य कर रहे हों
सूरजमुखी भी कुछ इसी तरह है
लेकिन मेरे जैसे मनुष्य के लिए वह कुछ ज़्यादा ही बड़ा है
और उसकी एक यह आदत मुझे अच्छी नहीं लगती
कि सूरज जिस तरफ भी जाता है
वह उधर ही अपना मुँह घुमाता हुआ दिखता है।

चित्र –कनक शशि

पलटवार किताबें

टुलटुल

हाँ, सचमुच। किताबें भी पलटवार कर सकती हैं। कैसे, आप पूछ रहे हैं? ऐसे कि आप सोचो – ज़रा आराम कर लूँ। एक किताब लेकर लेट जाऊँ और पढ़ते-पढ़ते थोड़ा ऊँघ लूँ, पर जब इन पलटवार किताबों को पढ़ने लगो तो होश ठिकाने लग जाए। वो आपके मन में कोई ऐसा कीड़ा छोड़ दें, कोई गहरा विचार, जो आपकी नींद उड़ा दे। जो लगातार आपसे सवाल पूछता चले। हर मोड़ पर, हर बात पर और आपको मज़बूर कर दें कि आप अपने आस-पास की हर शय को एक अलग निगाह से देखने लगें।

ये पलटवार किताबें दिखती भी कुछ अलग ही हैं। मिट्टी के भूरे रंग और उसकी सौंधी खुशबू व खुरदुरेपन वाली ये छह किताबें एकलव्य द्वारा प्रकाशित हुई है। पहली किताब जो हिन्दी और अँग्रेज़ी दोनों में है – मेहनतकशों के पसीने की लोककथा है। एक मुर्गी के बिम्ब में यह कहानी स्त्री की भी हो सकती है या हर उस इन्सान की जो मेहनत करते हैं, फसल उगाते हैं, सड़क बनाते हैं, घर बाँधते हैं, कपड़ा बुनते हैं और न जाने क्या-क्या करते हैं हमारे-आपके जीवन को सँवारने के लिए। पर जब उनकी बारी आती है, तो उन्हें मिलता है महज़ भूख, अभाव और गुमनामी। क्यों और कब तक? अब और नहीं...

दूसरी किताब अपनी बात पूरी तरह चित्रों में कहती है। वह जीवन के ताने-बाने का गीत गाती है। एक चक्करदार गीत। जो हर कुछ पीढ़ियों में दोहराया जाना चाहता है। जिसमें बसते हैं पेड़, जानवर, कीड़े-मकोड़े और इन्सान और...?

तीसरी किताब नागार्जुन की एक कविता को सजीव चित्रों में परोसती है। आप देख सकते हैं, महसूस कर सकते हैं कि कैसे एक परिवार, घर, दरो-दीवार, उसकी हद में बसने वाले सारे जीव कैसे तिल-तिलकर दुबलाते हुए जी रहे थे अकाल में। किस तरह अन्न का आना पूरी कायनात में उम्मीद और उत्सव भर देता है।

अन्तिम दो किताबें प्राचीन युग के शिकार-बटोर जीवन की कहानियाँ सुनाती हैं - शैल चित्रों और मन्दिरों के मूर्तिशिल्प की मदद से। वो बताती हैं कि बहुत बहुत साल पहले क्या करते थे स्त्री और पुरूष। समाज में क्या भूमिका हुआ करती होगी उनकी?

ये किताबें यूँ तो मिनटों में पढ़ जाएँगे आप, पर ये उम्मीद करती हैं कि आपके ज़हन में इनकी याद और इनके छोड़े विचार, आपकी नज़रों में अपने आसपास देखने का इनका पैनापन सालों-साल तक बना रहेगा...।

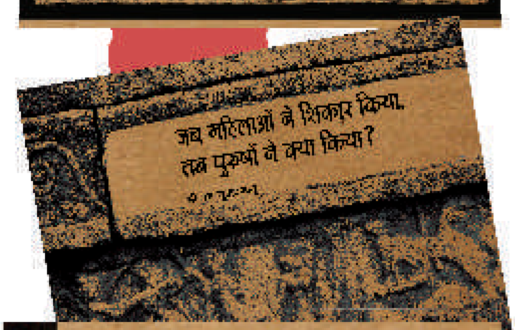

तुम भी बनाओ

रंग-बिरंगे फूल भला किसे नहीं भाते? लेकिन कागज़ के फूल, चौंक गए न? वर्गाकार कागज़ से इतने सुन्दर फूल बन सकते हैं कि देखने वाले दाँतों तले उँगली दबा लें। तुम भी बनाओ हमारे साथ फूल।

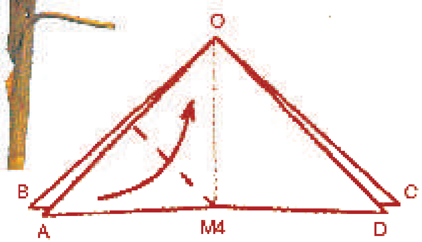

1. पानी गेंद आधार बना लो। A कोने को O बिन्दु पर रखकर खाई मोड़ बना लो। इस प्रक्रिया को बाकी के तीनों कोनों पर भी दोहराओ।

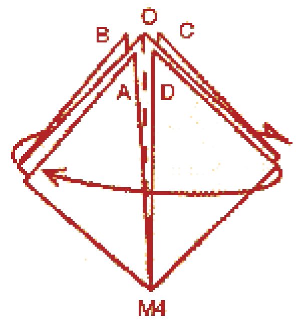

2. चार नए कोने उभर आएँ। दो ऊपर और दो नीचे। ऊपर के दाएँ वाले कोने को बाईं ओर ले जाओ। नीचे के बाएँ वाले कोने को दाईं ओर ले जाओ।

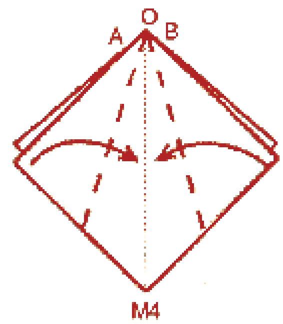

3. D और C कोने वाली सतहों से तिरछे खाई मोड़ बना लो।

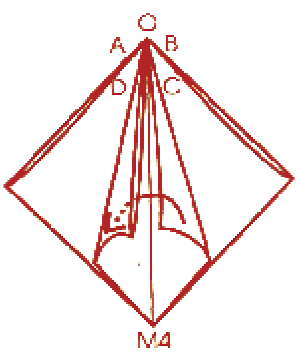

4. मुड़े हुए दोनों कोनों को एक दूसरे में फँसाओ।

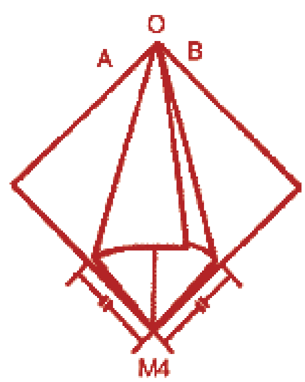

5. कोने एक दूसरे में जहाँ तक जा सकें भर दो। ख्याल रहे कि दोनों कोनों के नीचे की तरफ बची दूरी बराबर रहे। दोनों ओर बराबर दूरी छोड़कर मोड़ पक्के कर लो। आकृति के दूसरी तरफ कदम 3 से 5 तक की प्रक्रिया दोहराओ।

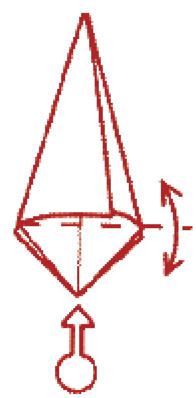

6. आकृति के नीचे के त्रिभुजाकार हिस्से को मोड़कर खोल लो। सुराख से हवा भरकर इसको फुला लो।

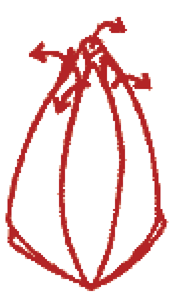

7. केन्द्र O से जुड़े हुए A, B, C और D कोनों को बाहर की तरफ मोड़ लो।

8. चित्र को देखो और याद करो बन्द कली को किस तरह से खोलकर तुम फूल बना लेते हो।

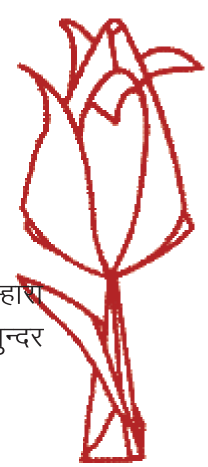

9. इस तरह बनेगा तुम्हारा फूल। सुराख में एक सुन्दर डण्डी लगा लो।

चित्र :विन्सेंट वैन गॉ

सूरजमुखी

रुद्राशीष चक्रवर्ती

अनुवाद - सजिता नायर

सिर्फ सूरजमुखी ही नहीं कई फूल हैं जो सूरज की दिशा के साथ गति करते हैं, जैसे गेंदा या सेवन्ती। इस गुण को हीलियोट्रोपिज़्म (या सूरज का पीछा करना) कहते हैं, यानी ऐसी क्रिया जहाँ कोई चीज़ सूर्य की दिशा के हिसाब से घूम रही हो या सूर्य की तरफ बढ़ रही हो। अगर आप ठंड के दिनों में पूरे दिन बालकनी में बैठे धूप सेक रहें और जैसे-जैसे सूरज की दिशा बदले आप भी अपनी जगह बदलते रहें तब आप हीलियोट्रोपिज़्म के उदाहरण बन जायेंगे।

वैसे सूरजमुखी के परिपक्व हो चुके फूल सूरज के साथ दिशा नहीं बदलते। वे एक ही दिशा की तरफ मुँह किए रहते हैं। आमतौर पर यह पूर्व दिशा होती है। सिर्फ अपरिपक्व फूलों में हीलियोट्रोपिज़्म देखने को मिलता है। जैसे ही फूलों की कलियां खुलने लगती हैं यह प्रकिया बन्द हो जाती है। दरअसल तेज़ी से बढ़ रहे सूरजमुखी के तने, फूल और पत्तियों समेत सूरज के साथ दिशा बदलते हैं।

कोई पौधा सूरज का पीछा क्यों करे?

एक जगह पर रहने से जितनी सूरज की किरणें फूल-पौधों पर पड़ती हैं उससे 10-15 प्रतिशत ज़्यादा उन्हें हीलियोट्रोपिज़्म प्रदान करता है। तो तना/पौधा अगर सूरज का पीछा (सोलर-ट्रैकिंग) करता है तो वे कुछ अधिक मात्रा में सूरज की किरणों को सोख पाते हैं। इससे इनको फोटोसिंथेसिस (यानी प्रकाश संश्लेषण) में मदद मिलती है। जितनी ज़्यादा फोटोसिंथेसिस उतना ज़्यादा खाना। एक बढ़ते हुए पौधे के लिए थोड़ा सा भी अधिक खाना महत्वपूर्ण हो सकता है। लगातार बढ़ने वाले पत्ते और फूलों की कलिया हरी होती हैं और सक्रिय रूप से फोटोसिंथेसिस करती हैं।

सूरज का पीछा करने के प्रभाव को समझने के लिए शोधकर्ताओं ने कई सूरजमुखी के पौधों को बाँधकर रखा था ताकि वे हिल न पाएँ। ऐसा करने पर

उन्होंने पाया कि सूरज के साथ घूम सकने वाले पौधों की तुलना में इनकी फूल और पत्तियाँ छोटी रह गईं।

सोलर ट्रैकिंग कैसे होती है?

दरअसल सूरजमुखी के कलि के ठीक नीचे का भाग यानी उसके तने की गर्दन में ही झुकाव होता है। पौधों के तने में पश्चिम दिशा की ओर की कोशिकाएँ सुबह सूर्य की किरणों की मदद से बढ़ती और लम्बी होती हैं। यानी तने का सूरज के विपरीत भाग अधिक लंबा और सूरज के सामने वाला भाग कम लंबा हो जाता है। नतीजतन सूरजमुखी की कलियां सूरज की तरफ झुक जाती हैं। सूर्य जिस दिशा में आसमान में चलता है उसके उलटी दिशा के भाग में पौधों की कोशिकाएँ बढ़ती हैं। इसीलिए फूल हमेशा सूर्य की ओर देखता नज़र आता है।

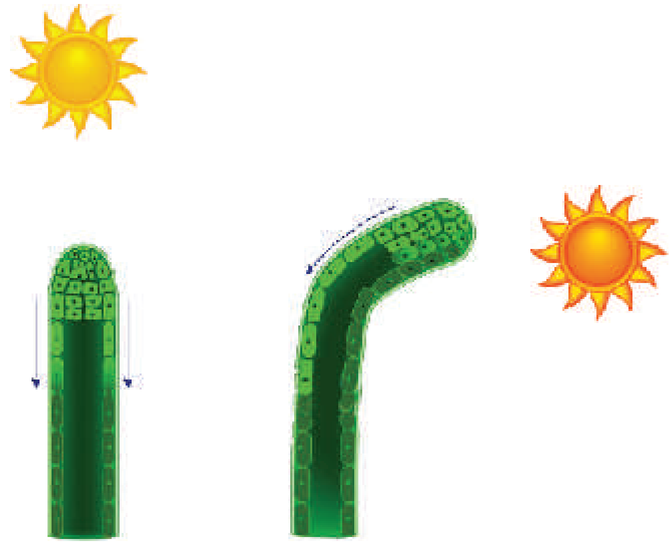

लेकिन इसमें एक पेंच है। सूरज ढलने के बाद भी पौधे दिशा बदलते हैं और सुबह तक पूर्व दिशा की ओर दोबारा आ जाते हैं। कभी-कभार तो शाम को सूरज के पूरी तरह ढलने से पहले ही सूरजमुखी पूर्वी दिशा की ओर हो जाते हैं। सवाल यह है कि रात में जब सूरज नहीं होता है, या शाम को ही फूल पूरब की तरह कैसे मुड़ता है? इसे समझने के लिए एक और संकल्पना है, जैविक घड़ी। माना जाता है कि इस घड़ी के इशारे पर सूरजमुखी जैसे फूलों का दिशा बदलना होता है।

हम इंसानों के अन्दर एक अन्दरूनी घड़ी होती है जो हमारी शारीरिक क्रियाओं को नियंत्रित करती है। इसका असर बड़ी

आसानी से दो बातों से पता लगाया जा सकता हैः दिनभर हमें किस-किस वक्त भूख लगती है और सामन्यतः हमें कब नींद आती है? हमारे शरीर की अन्दरूनी प्रक्रिया को सम्भव बनाने वाली इस घड़ी को सर्केडियन क्लॉक (जैव-चक्रीय आवर्तन घड़ी) भी कहते हैं। यह लगभग 24 घण्टे चलती है। हाल ही में इकट्ठा किए गए वैज्ञानिक प्रमाणों के अनुसार सूरजमुखी का 24 घण्टे में पूर्व से पश्चिम और रातभर में वापस पूर्व की ओर दिशा बदलना भी जैव-चक्रीय आवर्तन के कारण ही होता है। यह आन्तरिक घड़ी कुछ अनुवांशिक जीन के समूह से बनी होती है। जीन से ही निर्धारित होता है कि पौधा कैसा व्यवहार करेगा। पौधे के आन्तरिक चक्र में लय लाने के लिए हर एक जीन अपना काम करता है। यह आन्तरिक लय पौधे के अन्दर की बहुत सारी प्रक्रियाओं को नियंत्रित करती है। जैसे मेटाबॉलिज़म, हीलियोट्रोपिज़्म और पौधे का विकास। अब असल परेशानी यह पता लगाने में है कि इन सूरज का पीछा कराने वाले जीनों का बन्द और चालू होना सूरज की किरणों से होता है या पौधे के अन्दर कुछ और भी है।

सोलर ट्रैकिंग परिपक्व सूरजमुखी फूलों में क्यों नहीं?

वैसे परिपक्व हो चुके सूरजमुखी सूरज के साथ दिशा नहीं बदलते। वे एक ही दिशा की तरफमुँह किए रहते हैं। आमतौर पर यह पूर्व दिशा होती है। सिर्फ अपरिपक्व फूलों में हीलियोट्रोपिज़्म देखने को मिलता है। जैसे ही फूलों की कलियाँ खुलने लगती हैं यह प्रकिया बन्द हो जाती है। एक पूरी तरह खिल चुके सूरजमुखी के तने कठोर हो जाते हैं। पूरा खिला सूरजमुखी इतना वज़नी हो जाता है कि उसे घुमा पाना उसके तने के बस के बाहर हो जाता है। यही कारण है कि जंगली सूरजमुखी खिलने के बाद सूरज की तरफ नहीं झुकती। कुछ शोधकर्ताओं का मानना है कि परिपक्व हो चुके पौधे का बढ़ना कम हो जाता है, इसलिए उसकी आन्तरिक जैविक प्रक्रियाएँ यह सुनिश्चित करती हैं कि वो दोपहर और शाम की किरणों की बजाय सुबह की हलकी किरणों को ज़्यादा सोखें। इससे उनका दिन में पश्चिम दिशा की तरफ घूमना धीरे-धीरे बन्द हो जाता है।

एक बात तो तय है, हम में से ज़्यादातर सूरजमुखी के पौधे को कली के खिलने के बाद ही पहचान पाते हैं। और वे पूर्व के आसमान को लगातार देखते हुए ऐसे खड़े रहते हैं मानो अपनी बची ज़िन्दगी की हर सुबह वे सूरज के उगने के इन्तज़ार में हों।

विज्ञापन

Education for Social Change

Azim Premji University

UNDERGRADUATE PROGRAMMES

- Bachelor of Arts (Economics | Humanities)
- Bachelor of Science (Biology | Physics)

POSTGRADUATE PROGRAMMES

- Master of Arts in Education
- Master of Arts in Development
- Master of Arts in Public Policy & Governance
- Master of Laws (Law & Development)

highlights

- Learning beyond the classroom
- A rich blend of theory and practice
- Faculty experienced in teaching and research
- Vibrant student life
- 50 - 100 % scholarships based on family income

apply now

Admissions Open

Azim Premji University
PES Campus, Hosur Road
Electronics City
Bengaluru - 560100

www.azimpremjiuniversity.edu.in
Call: 1800 843 2001

मैं कलकत्ता में रहता हूँ लेकिन मेरा गाँव बिहार के गया ज़िले में है। मेरा परिवार पिछले 40 सालों से कलकत्ता में ही रहता आ रहा है। मेरा तो जन्म भी यहीं हुआ है। हर साल मैं अपने परिवार के साथ गर्मी की छुट्टियों में गाँव जाता हूँ। मेरे गाँव का नाम रज़ापुर है। कलकत्ता से बिलकुल अलग। एक तो गाँव पहुँचना ही अपने आप में एक बड़ा काम है। सबसे पहले हम टैक्सी लेकर हावड़ा स्टेशन जाकर गया जानेवाली ट्रेन में बैठते हैं। करीब दस घण्टे की यात्रा के बाद गया स्टेशन उतर कर गाँव जानेवाली बस में बैठते हैं। गाँव पहुँचने में करीब तीन घण्टे लग जाते हैं।

गाँव का माहौल देखकर लगता है कि किसी दूसरे जगत में ही आ गए हैं। कलकत्ता के विपरीत यहाँ जीवन काफी धीमी गति से चलता है। कलकत्ता में जहाँ हर कोई हड़बड़ी में दिखता है, गाँव में वैसी स्थिति नहीं है। न गाड़ियों से निकलनेवाला काला धुआँ, न हॉर्न की आवाज़ें। रास्ते भी एकदम खाली रहते हैं। कभी-कभार कोई ट्रैक्टर या कोई मोटरसाइकिल दिखती है। ज़्यादातर लोग आज भी या तो पैदल चलते हैं या फिर साइकल पर। एक वाहन जो गाँव में बहुत दिखता है वो है बैलगाड़ी। वैसे कलकत्ता में भी दो वाहन हैं जो भारत में सिर्फ वहीं चलते हैं। एक है हाथ से खींचा जानेवाला 'रिक्शा' और दूसरा है, 'ट्राम'।

गाँव में पूरा दिन बहुत मज़े में कटता है। सुबह-सुबह हम सारे भाई-बहन गाँव घूमने निकल जाते हैं। स्कूल तो जाना नहीं होता है। खेतों में, फलों के बागानों में घूमघाम कर गाँव के तालाब में पहुँचते हैं। वहाँ देर तक पानी में उछल-कूद मचाकर सिर्फ खाने के लिए घर लौटते हैं। खाना खत्म हुआ नहीं कि फिर घूमने निकल जाते हैं। सूरज ढलने पर ही फिर घर लौटते हैं। मन तो करता है कि खेलने में ही लगे रहें। लेकिन गाँव में शाम के बाद चारों तरफ अँधेरा ही अँधेरा हो जाता है। सिर्फ घरों में ही बिजली होती है। वैसे घर में भी खूब मज़े करते हैं। जहाँ खेलने के लिए इतने सारे चचेरे-ममेरे भाई-बहन हों वहाँ खाली बैठने का समय ही नहीं मिलता। रात के खाने के बाद हम सारे भाई-बहन दादी को घेरकर बैठ जाते हैं और देर रात तक कहानियाँ सुनते हैं। मैं भी कलकत्ता के बारे में खूब सारी बातें सुनाता हूँ। रोज़ ऐसे ही पूरा दिन बीत जाता है।

देखते-देखते गर्मी की छुट्टियाँ कब खत्म हो जाती हैं पता ही नहीं चलता। फिर कलकत्ता लौटने का वक्त आ जाता है। खुशी भी होती है और दुख भी। कलकत्ता लौटकर स्कूल के दोस्तों से मिलने की खुशी होती है। गाँव आने के लिए अब पूरे एक साल का इन्तज़ार करना पड़ेगा इस बात का दुख भी होता है।

गाँव और कलकत्ता

हारून राशिद,
चौथी, आदर्श हिन्दी हाई स्कूल, *कलकत्ता*

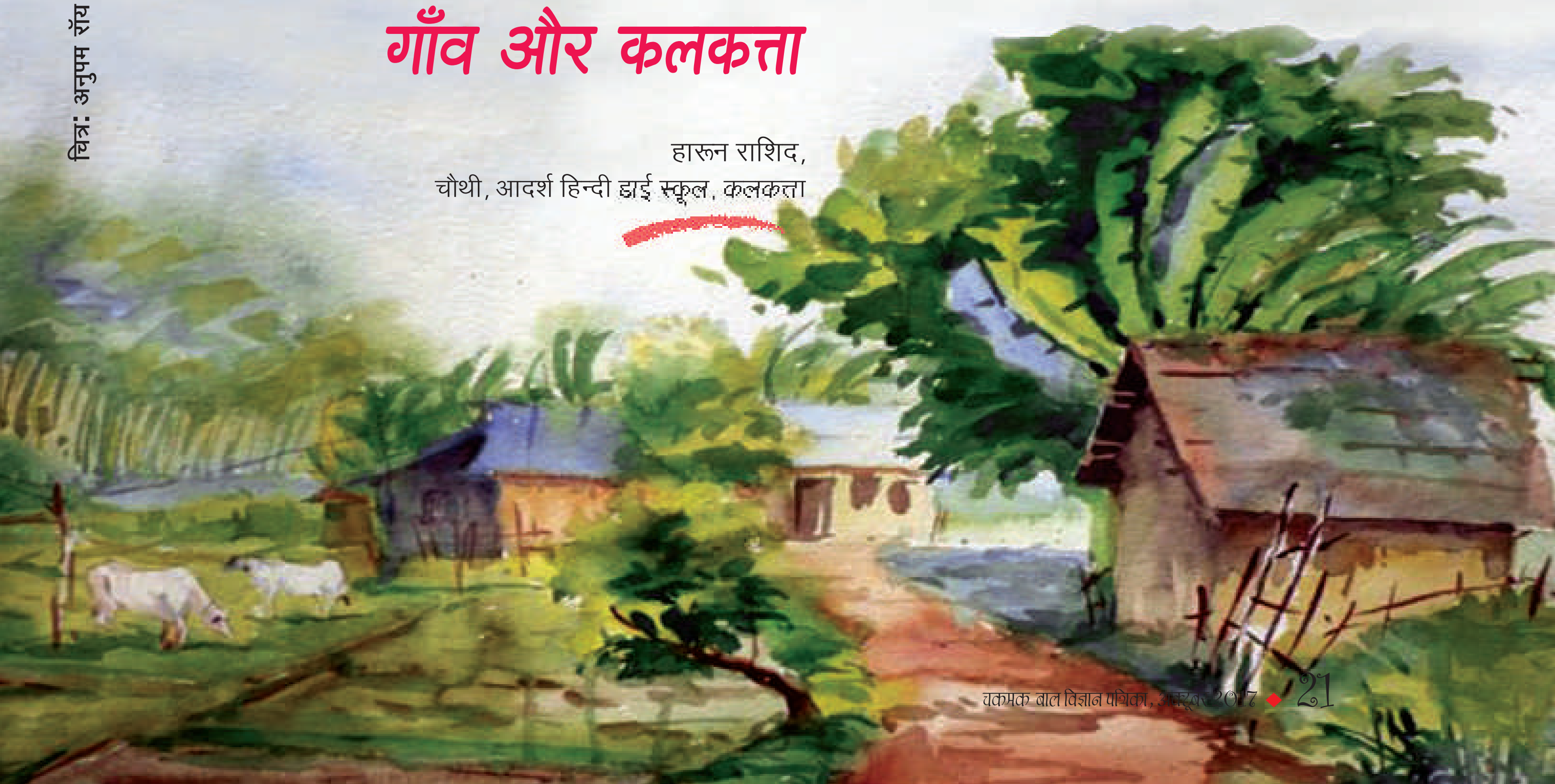

चित्र: अनुपम रॉय

केशों में केसर वन

प्रियंवद

"चलो... मैं तुम्हें अपना घर दिखाऊँ।" नन्ही मर्मेड (मत्स्य कन्या) ने कहा। लाजवन्ती ने सामने देखा। नीला...हरहराता समुद्र था। उसके ऊपर अधखिले पीले फूल की तरह धूप पसरी थी। कहीं-कहीं कोहरे के कुकुरमुत्ते उगे थे। लाजवन्ती और मर्मेड ऊपर उठकर, नीले आसमान पर उकड़ूँ बैठे बादलों के कानों में कुछ कहते। खिलखिलाकर दोनों दौड़ते...हँसते। किनारे की बालू पर औंधी पड़ी सीपियाँ और दौड़ते केकड़े खुद को इस खेल में शामिल करने के लिए उनकी खुशामद कर रहे थे।

लाजवन्ती ने मर्मेड का हाथ पकड़ लिया। उसने एक ऊँची छलाँग लगाई और लाजवन्ती को अपने साथ समुद्र के ऊपर खींचती ले गई। लाजवन्ती भी अब मर्मेड की तरह हिल रही थी। वे समुद्र की तली पर पहुँच गए। वहाँ नन्हे पेड़ थे। शंख थे, कछुए थे, मछलियाँ थीं। उनके बीच सीपियों का छोटा-सा घर था। दरवाज़े पर नीले खरगोशों की बग्घी खड़ी थी। लाजवन्ती हैरानी से चारों ओर की खूबसूरत दुनिया देख रही थी।

"तुम यहाँ रहती हो?" उसने हैरानी से पूछा।

"हाँ...और तुम?"

"चलो...मैं तुम्हें अपना घर दिखाऊँ।"

मर्मेड ने लाजवन्ती का हाथ पकड़कर फिर ऊपर की ओर छलाँग लगाई। अब वे समुद्र के बाहर थे। हवाओं में तैरते हुए खेतों...पुलों को पार करके दोनों शहर आ गए। वहाँ सूखी नदी थी...रेल की पटरियाँ थीं...पतली अँधेरी गलियों में टूटी दीवारोंवाले पुराने मकान थे, गन्दी नालियाँ थीं, तारों पर चीखते कौए थे...सड़क किनारे की भट्टियों से उठता कसैला धुआँ था। चमड़े की दुर्गंध से लदी गाड़ियाँ खींचते इंसान थे। इनके बीच से लाजवन्ती वैद्यजी की बैठक से सीढ़ियाँ चढ़ती हुई मर्मेड को आँगन में ले आई। वहाँ गाय थी...तुलसी का पौधा था, हरसिंगार का पेड़ था।

"तुम यहाँ रहती हो?" मर्मेड ने आश्चर्य से पूछा।

"हाँ।" लाजवन्ती ने गर्व से कहा। "अब देखो मेरा नाचघर।" लाजवन्ती ने मर्मेड से हाथ छुड़ाया। नाचघर जानेवाली सीढ़ियों का दरवाज़ा ढकेला। दरवाज़ा नहीं खुला। लाजवन्ती ने और ताकत लगाई। नहीं खुला। लाजवन्ती ने मुट्ठी बाँधकर दरवाज़ा पीटा धम..धम..धम...। नहीं खुला। धम..धम..। नहीं खुला। लाजवन्ती दरवाज़ा पीटने लगी। धम..धम..धम। कोई था। कोई नाचघर का दरवाज़ा पीट रहा था। लाजवन्ती का पूरा बदन सिहर गया। उसकी आँख खुल गई। वह नाचघर के फर्श पर बैठी थी। हैरान होकर कुछ देर चारों ओर देखती रही। नींद की दुनिया अब नहीं थी। यह जागी हुई लाजवन्ती की दुनिया थी। वह फर्श से उठ गई। दोपहर को ही वह सोनख्वाब गाँव से लौटी थी। शाम होते ही भागकर नाचघर आई थी। मोहसिन नहीं आया था। मोहसिन के लिए सोन ख्वाब के रंगोंवाले दो रूमाल लाई थी। उसे बताने के लिए बहुत-सी बातें भी थीं। गड़रिए की कविता थी। लाजवन्ती ने सर उठाकर रोशनदान को देखा। उससे आनेवाली रोशनी मटमैली होने लगी थी। उदास लाजवन्ती चलती हुई पियानो तक आ गई। धम..धम..धम। फिर आवाज़ आई। नाचघर के पहले बड़े दरवाज़े को कोई पीट रहा था। ज़रूर कोई था। लाजवन्ती डरकर दीवार

चित्र : प्रशान्त सोनी

से चिपक गई। धम..धम। पियानो के पार गलियारा था। गलियारे के पार कमरे थे जिनमें पुराना सामान रखा था। बक्से थे। लाजवन्ती गलियारे में आई। अब वह दरवाज़ा देख सकती थी। दरवाज़े के नीचे झिरी में कुछ छायाएँ थी, आवाज़ें थीं। दरवाज़ा सीढ़ियों के पास था। लाजवन्ती ने दौड़कर गलियारा पार करना चाहा। पर तभी शोर के साथ दरवाज़ा खुल गया। लाजवन्ती की साँस रुक गई। दौड़कर वो कमरे में घुस गई। कमरे में दो बड़े बक्से एक के ऊपर एक रखे थे। वह बक्सों के पीछे छिप गई। बक्सों के बीच की जगह से अब वह सब देख सकती थी।

वो अन्दर आए। वो तीन थे। उनमें एक पादरी था जो सफेद चोगा पहने था। दूसरा लम्बा तन्दरुस्त आदमी था। तीसरा पादरी के साथ था। उसके हाथ में चाभियों का गुच्छा था..टॉर्च थी..कुछ औज़ार थे। लाजवन्ती ने पादरी हेबर को पहचान लिया। एक बार स्कूल की तरफ से वह चर्च और उसका म्यूज़ियम देखने गई थी। रोती हुई परी, सबसे पुरानी कब्रें, सेंट पीटर पॉल की मूर्तियाँ, पवित्र कपड़े, वेटिकन में आठ सौ साल पहले इस्तेमाल की जानेवाली सुनहरी नमकदानी, हाथ धोने का बर्तन, बीबी घर के हत्याकाण्ड में मिली खून से सनी कँघी, बाइबल। पादरी हेबर ने ही बच्चों को सब दिखाया था। बाद में सबको चॉकलेट दी थी। पेस्ट्री खिलाई थी। दूसरा आदमी काला बच्चा था। वह बहुत ध्यान से नाचघर को देख रहा था। दीवारों पर हाथ रख रहा था। वह आगे था। दोनों पीछे। वह हॉल में आया। उसने पूरा नाचघर देखा। गलियारे में आया। पादरी और साथ का आदमी भी गलियारे में आए। अब लाजवन्ती उनकी बातें भी सुन सकती थी।

काला बच्चा को नुजूमी की दोनों बातें याद थीं। सीढ़ियाँ और लट। उसने लाजवन्ती के घर जाती सीढ़ियों की ओर इशारा किया।

“ये सीढ़ियाँ?”

“ऊपर घर में जाती हैं।” पादरी हेबर ने कहा।

“घर नाचघर का हिस्सा है। पहले यहाँ नाचघर की देखभाल करनेवाला रहता था। बाहर से आनेवाले डान्सिंग ट्रुप भी रुक जाते थे। बाद में यह एक वैद्य को दे दिया गया। उन्होंने इसके मालिक का एक लाइलाज मर्ज़ दूर किया था। वैद्य बाहर से आए थे। रहने का ठिकाना नहीं था। तभी से उनका परिवार यहाँ रहता आ रहा है। आज भी उसी परिवार के एक वैद्य जी रहते हैं।”

“कोई सीढ़ियों से आता-जाता है?”

“नहीं...दरवाज़ा बन्द है।”

काला बच्चा आगे आया। उसने झुककर सीढ़ियाँ देखीं। धूल पर नन्हे पाँव जैसा कुछ बना था। वह कुछ देर उन्हें देखता रहा फिर सीधा हो गया। उनके पास लौट आया।

“आता तो है...पाँव-सा कुछ बना है...शायद घर से बिल्ली या रोशनदान से कोई बन्दर आ जाता होगा।”

उन्होंने फिर गलियारे में लगे चित्र देखे। वे कमरे में आए। लाजवन्ती के ठीक सामने दरवाज़े पर ही रुक गए। अन्दर धूल थी...मकड़ी के जाले थे... चमगादड़ों की बीट थी.. कबूतरों की गन्दगी थी। काला बच्चा कमरे के अन्दर नहीं गया। दरवाज़े से ही उसने सब देखा। लौटकर वह फिर गलियारे में आ गए।

“और लट?” अचानक काला बच्चा ने पूछा।

“कैसी लट?” पादरी हेबर समझे नहीं।

“पता नहीं...पर नाचघर और किसी लट का कोई सम्बन्ध है?”

पादरी हेबर ने कुछ क्षण सोचा। “आप शायद उस किस्से की बात कर रहे हैं जो चला आ रहा है...पर वह किस्सा ही है।”

“क्या?”

“लम्बी बात है...।”

“हमारे पास समय है।”

“नाचघर शुरू से ही इतना बड़ा और शानदार नहीं था।” पादरी हेबर ने साँस ली। “पहले यह एक मामूली इमारत थी। यहाँ बग्घियाँ बनती थीं। इसका अँग्रेज़ मालिक बग्घियाँ बनाने और बेचने का सौदागर था। अट्ठारह सौ सत्तावन के गदर में वह शहर छोड़कर भाग गया। इस इमारत पर सिपाहियों ने कब्ज़ा कर लिया। यहाँ उनका अनाज इकट्ठा होता था। घोड़े बँधते थे। पकड़कर लाए गए अँग्रेज़ सिपाही रखे जाते थे। बाद में जब अँग्रेज़ों ने शहर वापस जीता, तब इस इमारत में हिन्दुस्तानियों पर मुकदमे चलाए गए। सज़ाएँ दी गईं। पीछे फाँसीघर बनाकर फाँसियों पर लटकाया गया। कुछ समय बाद इसका मालिक लौट आया। कहते हैं गदर के दौरान उसे एक नाचनेवाली ने आठ महीने तक पनाह दी थी। लौटकर उसने उसकी याद में

नाचघर बनवाया। बाद में उसने बहुत पैसा कमाया। नाचघर को बड़ा और शानदार बनाया गया। शादी की, उसकी एक ही बेटी थी। मेडलीन नाम था उसका। लोग कहते हैं उसे पियानो बजानेवाले एक लड़के से बेपनाह मुहब्बत थी। जब वह पियानो बजाता और उसकी धुन पर पँजों के बल मेडलीन नाचती, तो देखने के लिए शहर टूट पड़ता था। उसके खुले बाल जब हवा में तैरते तो केसर की गन्ध के गुच्छे उड़ते थे। पियानोवाले का गीत पूरे शहर में मशहूर था।" पादरी हेबर ने एक क्षण सोचा..."हाँ ...याद आया।

नील नयन चन्दन वन

केशों में केसर वन..."

"लट कहाँ है?" काला बच्चा बेचैन हो रहा था।

"एक बार दोनों में मुकाबला तय हुआ।" पादरी हेबर बोल रहे थे। "बुर्ज़ुगों की यादों में आज भी उस मुकाबले के किस्से हैं। पूरा शहर तब देखने टूट पड़ा था। खिड़कियों के शीशों पर सर ही सर चिपके थे। पूरा हॉल...बालकनी...गलियारा.. सब भरा था। मुकाबला शुरू हुआ। लोगों की साँसें रुक गईं। वह पियानो बजाते हुए गा रहा था, जैसे समुद्र के पानी पर तैरती परी हो। संगीत के स्वर ऊँचे और तेज़ होते जा रहे थे। उसके नाच की गति बढ़ रही थी। दोनों में कोई कमतर नहीं था। फिर पियानोवाले ने एक ऐसी धुन निकाली जो पहले कभी किसी ने नहीं सुनी। कहते हैं यह धुन वही थी जिसमें पहली बार बिलाल ने अज़ान लय में पढ़ी थी। पता नहीं पियानोवाला कहाँ से लाया था। पियानो से उस धुन का निकलना असम्भव था। पर उसने वह धुन निकाली। मेडलीन

नहीं नाच पाई। वह हार गई। उसने वहीं, सबके सामने चाँदी की छोटी डिबिया में अपने बालों की एक लट काटकर पियानोवाले को दी। कुछ लोग कहते हैं मेडलीन जानबूझ कर हारी।" पादरी हेबर चुप हो गए। उन्होंने एक लम्बी साँस ली।

"पर परम पिता जिन्हें ज़्यादा प्यार करता है अकसर उन्हें अपने पास जल्दी बुला लेता है। पियानोवाले को भी उसने बुला लिया। वह फौज में था। पहली बड़ी लड़ाई में उसे फ्राँस भेज दिया गया। वहाँ एक गाँव में अलसुबह वह एक पुल पर साइकिल से जा रहा था। बहुत घना कोहरा था। कुछ नहीं दिख रहा था। पता नहीं कैसे वह पुल का किनारा नहीं देख पाया। रेलिंग तोड़कर नीचे बर्फीली नदी में जा गिरा। यहाँ मेडलीन को जब पता लगा वह गुमसुम हो गई। वह फिर कभी नहीं नाची। कुछ समय बाद उसने यह शहर, देश छोड़ दिया। लन्दन में रहने लगी। उसने लम्बी उम्र पाई। वह अपनी सारी जायदाद दे गई सिवाय नाचघर के। नाचघर के लिए वह अपनी वसीयत कर गई है। वसीयत वहाँ बैंक के लॉकर में है। उसे खोलने का अधिकार अपने वकील को दे गई है। आज भी उसके पारिवारिक वकील के पास वह अधिकार है। वसीयत से ही मालूम पड़ेगा नाचघर का असली मालिक कौन है?"

"और लट...?" काला बच्चा चुपचाप सुन रहा था।

"हाँ..." पादरी हेबर बातों में भूल गए थे।

"उसने सबके सामने पियानोवाले को लट दी थी...यानी खुद को दे दिया था। अब उसका क्या हुआ यह सिर्फ नाचघर की दीवारें जानती हैं...या फिर वह वसीयत जो मेडलीन के सौवें जन्मदिन पर जल्दी ही लॉकर से निकालकर पढ़ी जाएगी।" पादरी हेबर के चहरे पर अब थकान और ऊब दोनों दिखने लगे। उन्हें काला बच्चा अच्छा नहीं लग रहा था या शायद नाचघर का बिकना।

"चलें?" उन्होंने काला बच्चा से पूछा।

"हाँ।" काला बच्चा ने एक बार फिर सर घुमाकर पूरा नाचघर देखा।

वे तीनों गलियारे से दरवाज़े की तरफ़ आए।

"मैंने अपना काम पूरा कर दिया।" पादरी हेबर चलते हुए बोल रहे थे। "अब आपको लन्दन बात करनी है। बेहतर होगा एक बार आप वहाँ चले जाएँ। वसीयत खुलनेवाले दिन वहाँ रहें। आपको भी सब मालूम हो जाएगा। सब जानने के बाद आप वहीं सौदा तय कर सकते हैं।"

काला बच्चा ने सर हिलाया। सलाह ठीक थी। वे सब दरवाज़े से बाहर निकल गए। दरवाज़ा खींचकर बन्द कर दिया। धम..धम..। उसे बाहर से भी ठोंक दिया गया। लाजवन्ती बक्से के पीछे से निकली। दौड़कर गलियारे में आई। डर और बेचैनी से उसका दम घुट रहा था। उसने कुछ गहरी साँसें लीं। दिमाग में जैसे धुआँ भर गया था। नाचघर बिक रहा था। उसका घर भी। चाँदी की डिबिया और लट मोहसिन के पास थी। वसीयत लन्दन में। तस्वीर मेडलीन की थी। किसे बताए सब। माँ को...दादी को? पर वे पूछेंगे उसे कैसे पता? फिर सब बताना होगा। उसका नाचघर आना बन्द हो जाएगा। मोहसिन से मिलना भी। नहीं... सबसे पहले मोहसिन को बताना ठीक होगा। क्यों नहीं आया?

वह रुआँसी हो गई। उसने सर उठाकर रोशनदान को देखा। अब बाहर अँधेरा था। अज़ान शुरू हो गई थी। दोनों वक्त मिल रहे थे। मोहसिन कहता था इस समय सब थम जाता है...जो जहाँ है रुक जाता है। हवा भी, समन्दर की लहरें भी। पेड़ों पर पत्ते नहीं हिलते...पानी में मछलियाँ नहीं तैरतीं। मोहसिन को अब नहीं आना था।

लाजवन्ती धीरे-धीरे सीढ़ियों की ओर बढ़ी। सीढ़ियाँ चढ़कर रुकी। उसने घूमकर देखा। अन्धेरे में डूबता, अकेला...थका...आखरी उम्र गिनता नाचघर था। लाजवन्ती के आँसू निकल आए। उसने दरवाज़ा खींचा और खाली जगह से अन्दर चली गई।

(जारी)

गूलर

नीना भट्ट

हमारे अड्डे पर ग्राहकों की कोई कमी नहीं है। यहाँ आने के लिए न तो ढोल पीटकर उन्हें न्यौता देना पड़ता है और न ही कोई और जुगत भिड़ानी पड़ती है। वे खुद ही चले आते हैं – गेट के नीचे से रेंगकर, दीवारें लाँघकर या आसमान से टपक कर ...वे आ ही जाते हैं!

गेरुआ, भूरे और चटक गुलाबी रंगों में धँसा गूलर हमारे आँगन की दीवार से टिका है। और बढ़ता ही जाता है। अपने नीचे गिरे गूलरों के सड़ने-गलने से बनी गैस में ये जैसे और भी मज़े से फलता-फूलता है। हमारे इस जंगली गूलर (अंजीर कुल का एक पेड़) के पेड़ उमरी (राजस्थान में बाँसवाड़ा के भील इसे उमरी कहते हैं) में तरह-तरह के ग्राहकों की आवाजाही लगी रहती है। यहाँ चिड़ियों, पशुओं, इंसानों की हाजरी लगती है।

चित्र : नीना भट्ट

वे गूलरों को चोंच मार-मारकर और चबाकर तने से, डाल से अलग करते जाते हैं और धड़ा-धड़ नीचे फेंकते जाते हैं। पेड़ के नीचे गूलरों के ढेर लग जाते हैं। और एक मोटी गूलरी कालीन-सी बुनी जाती है। जितनी तेज़ी से यह कालीन बुनी जाती है उतनी ही तेज़ी से चींटियों, भँवरों, कीड़ों... की सेना इसे उधेड़ने में जुट जाती है। फूटे-बिखरे गूलरों को अपने पैरों से कुचलते हुए यह सेना जब ज़मीन के नीचे अपने कारखानों में ले जाती है तो कालीन रेशा-रेशा हो उधड़ जाता है। हर महीने हफ्ते-भर के लिए हमारा घर दारू की बू से महकने लगता है। इन दिनों हमारा बगीचा मानो ताड़ी का पोखर ही बन जाता है।

हमारे इस *शबीन* में आनेवाले ग्राहकों में से कुछ तो प्रकाश के महीन कणों से भी छोटे हैं। कच्चे अंजीर में अण्डे देनेवाली छोटी-सी फिग वास्प एक ऐसी ही जीव है। अंजीर जब पककर फट पड़ती है तो वयस्क ततैए भड़भड़ाकर उसके मखमली भीतर से निकल आते हैं। वैसे ही जैसे फिल्म खत्म होने पर सिनेमाघर से एकदम से भीड़ निकलती है। कीटों की तलाश में कई परिन्दे हवाई करतब करते हुए पत्तियों में इधर-उधर फड़फड़ाते रहते हैं – काला-पीला गायक आयोरा, दर्ज़ी, प्रिनिया और फैनटेल फ्लाइकैचर।

रोज़ी पैस्टर बड़े-बड़े झुण्ड में पहुँचती हैं – जैसे भरी बस से मस्ताते हुए बराती उतरते हैं और फिर शुरू होता है उनका हो-हल्ला, खाना-पीना, सजना-सँवरना, मौज-मस्ती ...। बटरस्कॉच और काले - दोनों स्टारलिंग परिवार के सदस्य हैं। गर्मियों में अण्डे-बच्चे करने के बाद ये पूर्वी यूरोप से यहाँ आते हैं। उनके बायोडेटा में यह ज़रूर ही लिखा मिलेगा कि ये हमारे देश के सबसे लालची टिड्डा-खाऊ प्राणी हैं।

आए दिन आप उमरी के तने पर चुपचाप चढ़ते गिरगिट को देख सकते हैं। उमरी की डालों पर हलके रंग के गिरगिट, गूलर के गुच्छों के बीच लाल हो जाते हैं और खुले मुँह पतंगों के पीछे भागते हैं। इन गिरगिटों का पीछा करने आते हैं भारद्वाज पक्षी। जिनकी गूँजती आवाज़ के कारण ही प्यार से इन्हें ढोलकू (देसी ढोलक) कहा जाता है।

हमारी सराय फलाहारी चमगादड़ों के लिए रात भर खुली रहती है। ये विशाल चमगादड़ अपने डिज़ाइनर झबलों को झाड़ते हुए उतरते हैं। अगली सुबह पेड़ के नीचे से आप कच्चे अमरूद, बादाम, जामुन या आम जैसे कितने ही फल बीन सकते हैं। इन्हें आसपास के बगीचों से चुराकर पँजों के बल उलटा लटककर इत्मीनान से चबाया गया होता है।

जंगल में रहनेवाली हरियल उमरी के पत्तों की आड़ में खुद को छिपा लेती हैं। बीस-तीस के झुण्डों में आकर ये अंजीर खाती हैं। पर इस बात का भी पूरा ख्याल रखती हैं कि किसी को नज़र न आ जाएँ। उनकी मौजूदगी का पता सिर्फ उनकी मीठी कू-ऊ-ऊ-ई-ई... से चलता है। पर उनके पीले पैरों की, जैतूनी-हरे पँखों की एक झलक पाने के लिए बस एक छींक काफी है। इधर एक छींक आई और उधर वे आसमान में तितर-बितर हो गईं।

नवरात्री के समय - बीच सितम्बर से बीच अक्टूबर तक - हमारे पेड़ में एक अजीब-सी घटना देखने को मिलती है। कत्थई रंग के रेतनुमा गोलियों से पूरा बगीचा ढँक जाता है। ध्यान से सुनो, तो ऊपर पत्तों से एक फुसफुसाहट-सी सुनाई देगी। चिप्स खाते हुए जैसी आवाज़ होती है न, उससे मानो हज़ार-गुना धीमी आवाज़। दरअसल यह जंगली रेशम के पतंगों की इल्लियों की मरमराहट है। ये इल्लियाँ पेड़ के पूरे पत्तों को कायदे से चबाती रहती हैं।

पहले तो हम पत्ते विहीन पेड़ को देख दंग रह गए। फिर पाया कि बिना पत्ती के पेड़ में कोयल, गोल्डन ओरियोल क्या खूब दिख रही थीं। इन्हें भी इल्लियाँ बहुत पसन्द हैं। उन्हीं की फिराक में ये यहाँ थीं। जल्द ही इस विनाश से बचे रहे पत्ते चमकते हरे प्यूपा से ढँक गए थे। कुदरत के इस दिलकश ड्रामे का अगला सीन था एक शानदार हवाई करतब। इसमें वयस्क पतंगों में बदल चुके प्यूपा अपने पारदर्शी पंखों को फड़फड़ाते हुए भरभराकर निकल आए थे। हज़ारों शीशे के टुकड़ों से देखने पर उमरी के ऊपर का आसमान चटका-सा लग रहा था। सूरज की चमकती रोशनी में तारों पर बैठे बी-ईटरों (हरियल) ने उनको पकड़ा। कोतवाल (किरेन्जवा, ड्रोंगो) सबसे ऊपरी डालों पर तैयार बैठे थे। जब फ्लाइकैचर उनको पेड़ की छाँव से दूर उड़ाते वे अपने सिर को एक से दूसरी तरफ यूँ घुमाते मानो कोई टैनिस मैच देख रहे हों। पूरे एक महीने बाद उमरी अपने एक-एक पत्ते को वापस ले आई थी, जैसे कुछ हुआ ही नहीं था।

इस *फाइकस ग्लॉमरैटा* के बगल में रहना ऐसा है जैसे द ग्रेट गैट्स्बी (रईस लोगों की दुनिया, उनकी अय्याशी और बिगड़ने पर केन्द्रित एक मशहूर अमरीकी कहानी) के पड़ोस में रहना। इसकी एक मशहूर दावत में हमने अपना पहला मिनिवेट पक्षी देखा। इससे पहले मैंने किसी भी पक्षी पर वो सिन्दूरी रंग नहीं देखा था!

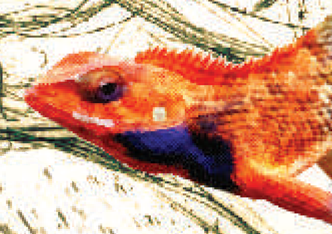

लँगूर इस फल को बेहद पसन्द करते हैं। ठूँसठूँस कर खाने के बाद वे हमारे ज़ीने पर जम जाते हैं - हर सीढ़ी पर एक लँगूर - सुस्ताए से इन लँगूरों में बन्दरोंवाली कोई बात नहीं थी...।

एक फैरल सूअर भी कुछ महीनों से वहाँ लगातार आ रहा था। सारा दिन अपना नशा पेड़ के नीचे सोकर उतारता और शाम को झटककर निकल जाता।

लेकिन गूलर गटकने की लत तो बसन्ता को थी। किसी ढाबे में साम्बर की कटोरी से बचकर निकली वो, हमारे पास एक सी.डी. के डिब्बे मे आई थी। एक ताज़े गूलर को अपनी चोंच में ढकेलकर ही उसकी लगातार होती टूँक, टूँक, टूँक को बन्द किया जा सकता था। जब तक वह उड़ी, गूलर को देखते ही टूँक टूँक करने की लत *मुझे* लग चुकी थी!

दाहोद से एक दोस्त की भी कुछ ऐसी ही कहानी थी। बचपन में अपने आदिवासी गाँव से आसपास के जंगल में घूमता हुआ वह भटक गया था। कई दिनों तक उसका कोई अता-पता नहीं था। उमरी के गूलर को खाया न होता तो वह अपनी कहानी सुनाने के लिए ज़िन्दा न बचा होता। उसे अपना हाथ पेड़ के गोल तने पर फेराता देख कोई भी समझ जाता कि वह अपनी ज़िन्दगी के लिए पेड़ का आभारी था, जैसे कि नन्हा बसन्ता। वह पेड़ के कई औषधीय उपयोगों को गिनवाने लगा। दूध पिलानेवाली माओं को उसका दूधिया सार दिया जाना, मुँह के छालों में इसके पानी से कुल्ला करना जैसे इस्तेमाल वो खूब जानता। कच्चे फलों की सब्ज़ी पकाई जा सकती है या देसी दारू बन सकती है। एक आदिवासी के लिए पेड़ एक सुपरमार्केट की तरह है। अकाल के समय में भी यह खिलाता रहता है। उसने हमें यह भी दिखाया कि कैसे पेड़ की जड़ पालथी मारे ज़मीन के नीचे गोदी का आकार बनाती है। किसी रुके हुए पानी के पास इस पेड़ को लगाया जाए तो वह उसके गन्दे पानी को जैसे सोख लेता है और उसको जीवन देनेवाली - ऑक्सीजन - में बदल देता है। बड़ के आकार जैसा होने के बावजूद उमरी के पास सहारा देनेवाली पेड़ से नीचे लटकती जड़ें नहीं हैं।

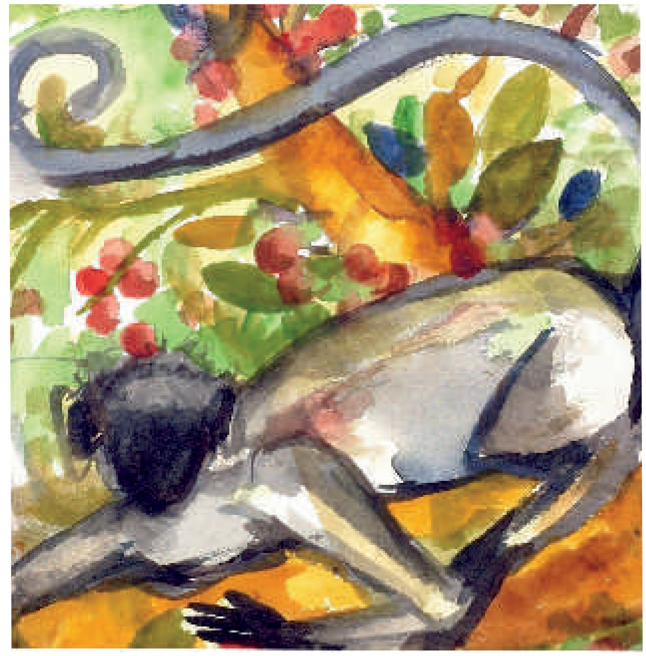

अगर इसे पानी के किसी स्रोत के पास उगा दिया जाए तो बहुत फैल जाता है। अपने इस मोटापे से जूझने के लिए यह अतिरिक्त वज़न को ऊपरवाली डालों में बाँट देता है। इस तरह यह किसी नट की तरह एक लम्बे भारी डण्डे के साथ अपना सन्तुलन बनाए रखता है। पेड़ को अगर बिना सोचे-समझे इधर-उधर से छाँट दिया जाए तो क्या अंजाम होगा, यह मैं आपकी कल्पना पर छोड़ देती हूँ। भगवान दत्तात्रेय से जुड़े इस पेड़ को कल्प वृक्ष कहा जाता है। कहा जाता है कि इसकी विशेष कृपा सारे जानवरों को मिलती है। हमारे पड़ोसी पूजा के लिए इसकी टहनियाँ ले जाते हैं। कहते हैं कि बहुत कम भाग्यशाली लोग ही इसे अपने बगीचे में खुद-ब-खुद बढ़ता देख पाते हैं।

पहली बारिश के बाद पेड़ के नीचे मशरूम की एक जादुई बस्ती उग आती है। वो उसकी घनी छाँव में अपना छाता खोल देती हैं। बाँबियों पर चढ़कर उमरी की नंगे जड़ों पर अपनी दुकान खोल लेती हैं।

बारिश के मौसम में हमारी उमरी को जैसे ज़मीन से ऊपर हवा में उठा दिया जाता है। चील, कौए, बाज़ और बगुले गुस्सैल हवाओं से पनाह पाने के लिए उसकी सबसे ऊपरी डालों पर आ टकराते हैं। मौसम के साथ-साथ यह पेड़ भी भयानक बन जाता है। जैसे एक कथकली नर्तक अपना हरा मुखौटा पहनकर अपनी फैली बाँहों को थरथराता है।

अंग्रेज़ी से अनुवादः विनता विश्वनाथन

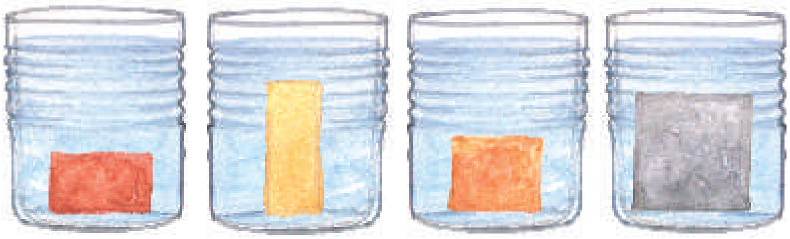

3 पानी से भरे इन चार बरतनों के अन्दर अलग-अलग माप की ईंटें रखी गई हैं। क्या तुम बता सकते हो कि किस बरतन में पानी की मात्रा सबसे ज़्यादा है और किसमें सबसे कम है?

माथापच्ची

1 **क्यों क्यों क्यों ???**
जेल के एक बैरक के बाहर दो चौकीदार हैं। एक का काम उत्तर दिशा से आनेवालों पर नज़र रखना और दूसरे का काम दक्षिण दिशा से आनेवालों पर नज़र रखना है। अचानक उनमें से एक चौकीदार दूसरे से बोला, “तुम मुस्करा क्यों रहे हो?” उसे कैसे पता चला कि उसका साथी मुस्करा रहा है?

लोहे की हैं दो तलवारें
खूब लड़ें पर साथ रहें
(ग्रिक्ँ)

2 चॉक के टुकड़े को पानी में डालने पर बुलबुले क्यों उठने लगते हैं?

4 सारा और अयान टेनिस खेल रहे थे। उन्होंने अपने हरेक खेल के लिए 10 रुपए की शर्त लगाई। सारा ने तीन खेल जीते और अयान को कुल 50 रुपए का फायदा हुआ। ज़रा बताओ कि उन्होंने कुल कितने खेल खेले?

5 एक दुकानदार दो अलग-अलग माप के बक्सों में नाशपाती बेचता है। एक तरह के बक्से में 5 नाशपाती आती हैं और दूसरे तरह के बक्से में 12। एक दिन उसने एक घण्टे में 68 नाशपाती बेचीं। वह अपने साथी से बोला आज हमने दोनों तरह के बक्से बराबर-बराबर बेचे। ऐसा कम ही होता है। एक घण्टे में उन्होंने दोनों तरह के कितने-कितने बक्से बेचे?

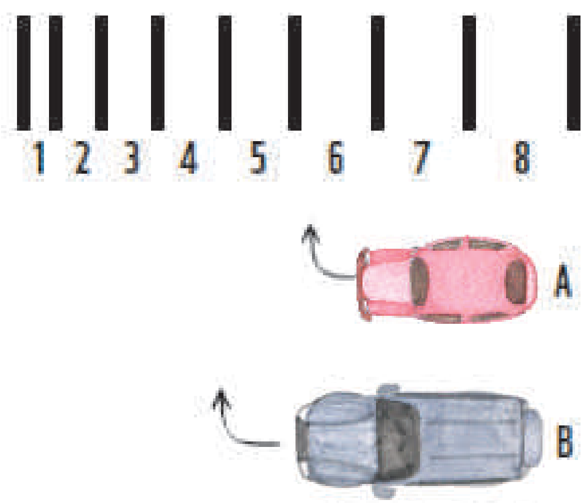

6 एक कार रेसिंग प्रतियोगिता में ड्राइवर को अपनी कार सबसे संकरे रास्ते से निकालनी है वो भी बिना खम्बे से टकराए। क्या तुम बता सकते हो कि इन दोनों ड्राइवरों को कौन-सा रास्ता चुनना चाहिए?

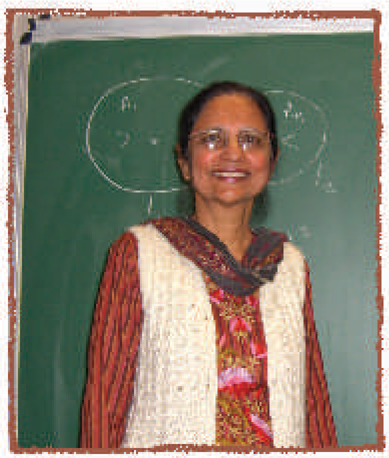

राजिन्दर हंस गिल

पढ़ाई का गणित

गणितज्ञ राजिन्दर हंस गिल की कहानी

आमतौर पर माना जाता है कि गणित लड़कियों का विषय नहीं है और लड़कियों को दसवीं के बाद इसको चुनने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाता है। पर हमारे ही देश में कई प्रख्यात महिला गणतज्ञ हुई हैं जिन्होंने गणित में नई और महत्वपूर्ण खोजें की हैं। यहाँ पेश है ऐसी ही एक महिला की कहानी उन्हीं की जुबानी...

संख्याओं की ज्यामिति (रेखागणित), गणित का एक ऐसा क्षेत्र है जो ज्यामिति के सिद्धान्तों व पद्धतियों को संख्या सिद्धान्त के प्रश्नों पर लागू करता है। भारत में इस विधा की विशेषज्ञ हैं, राजिन्दर हंस गिल, जो पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ में बतौर प्राध्यापक सेवानिवृत्त हुई हैं।

मेरा जन्म सन् 1943 में पंजाब के मोही गाँव में हुआ। पूरा ही बचपन लुधियाना ज़िले के छोटे-छोटे गाँवों में बीता। मेरे पिता डॉक्टर थे। उनकी नौकरी अकसर ग्रामीण इलाकों में होती थी। मेरी माँ गुरदीप कौर गृहणी थीं। उन्होंने शादी के बाद पत्राचार से, स्वाध्याय से ही अपनी शिक्षा पूरी की थी। पिता के बार-बार होनेवाले तबादले मुझे परेशान कर देते थे। मुझे एक से दूसरी जगह जाना अच्छा नहीं लगता था। गाँवों में लड़कियों के लिए पढ़ने के अवसर नहीं थे। हमें लड़कों के स्कूलों में पढ़ने की इजाज़त नहीं थी और लड़कियों के लिए कोई अलग स्कूल था नहीं। इसलिए शुरू के कुछ साल मैंने घर पर ही पढ़ाई की। हालाँकि मुझे स्कूल जाने का बहुत मन करता था। मेरे माता-पिता ने मुझे पढ़ने के लिए बहुत प्रोत्साहित किया और मेरा मार्गदर्शन भी किया। कभी-कभी अगर हेडमास्टर पिताजी की पहचान के होते तो मैं किसी क्लास में बैठ भी जाती थी। मैंने उस वक्त का पूरा मज़ा लिया।

जब मैं छोटी थी तो अकसर सोचती कि लड़कियों को स्कूल क्यों नहीं भेजा जाता! उनके पास नौकरियाँ क्यों नहीं होतीं! और जीवन के हर क्षेत्र में उनके साथ भेद-भाव क्यों होता है! मेरे माँ-पिता से अस्पताल के कर्मचारी अपनी मुश्किलें साझा करते थे। उन्हें सुनकर भी मुझे खासकर महिलाओं के सामने पेश आने वाली समस्याओं का अहसास हुआ। मैं इन विषयों पर सोचते हुए घण्टों बिता देती। एक ऐसी नई दुनिया का सपना भी देखती जो समानता पर आधारित होगी। बचपन में ही मेरे मन में यह बात बैठ गई थी कि इन सब समस्याओं से पार पाने के लिए महिलाओं को पढ़ना और नौकरी करना बहुत ज़रूरी है।

जब मैं लगभग छह साल की थी, मेरे पिता का तबादला इसरू गाँव में हो गया। यहाँ लड़कियों के लिए प्राइमरी स्कूल था। इस स्कूल में एक बड़ा कमरा और आँगन था। एक अनौपचारिक परीक्षा हुई और मुझे पाँचवीं कक्षा में दाखिला मिल गया। उस स्कूल में एक ही शिक्षक थे। इसलिए पढ़ाई बहुत कम होती थी। शायद इसीलिए स्कूल में मेरी कोई खास दिलचस्पी नहीं थी। मेरी क्लास की सभी लड़कियाँ उम्र में मुझसे काफी बड़ी थीं। उन्हें शायद यह बात बुरी लगती कि मैं उनसे बहुत ज़्यादा जानती थी। स्कूल में मेरी कोई दोस्त नहीं थी। मुझे बहुत बोरियत होती थी, लेकिन स्कूल एक ही था इसलिए मैंने वहाँ जाना जारी रखा।

एक साल तक मैंने घर पर ही अँग्रेज़ी, अंकगणित और पंजाबी की पढ़ाई की। मेरे ताऊजी नायब तहसीलदार थे। मैं लड़कों के स्कूल में पढ़ सकूँ इसलिए मैं ताऊ जी के साथ रहने लगी। हालाँकि वे मुझे अपने साथ रखने के लिए बड़ी मुश्किल से राज़ी हुए थे। मैं वहाँ लड़का बनकर ही जा सकती थी। यह रहस्य सिर्फ हमारे परिवार और हेडमास्टर को पता था। मेरे ताऊजी महिलाओं की शिक्षा के एकदम

खिलाफ थे। पर जब मैंने और पिताजी ने खूब मिन्नतें कीं तब उन्होंने यह रास्ता निकाला था। मुझे पगड़ी पहनकर अपने भाई के साथ स्कूल जाना पड़ता था। पर स्कूल जाना फिर भी मुझे बहुत अच्छा लगता था। इसका एक और फायदा यह हुआ कि मैं अपने ताऊजी के घोड़े की थोड़ी-बहुत सवारी भी कर लेती थी।

मैंने नियमित रूप से स्कूल जाना तो 1952 में शुरू किया जब मेरे पिता का तबादला गुज्जरवाल हुआ। इस गांव में लड़कियों का एक हाईस्कूल था। मैंने वहीं आठवीं कक्षा में दाखिला लिया। मैंने पाया कि आम तौर पर लड़कों के स्कूलों का स्तर बेहतर था और उनमें सुविधाएँ भी बेहतर थीं। यह लड़कियों के साथ होनेवाले अन्याय का एक और उदाहरण था।

दुर्भाग्य से मेरे स्कूल में विज्ञान और गणित नहीं पढ़ाया जाता था। लड़कियों से यही अपेक्षा रहती कि वे गृहविज्ञान की कोई पढ़ाई कर लें। पर इसमें मेरी ज़रा भी दिलचस्पी नहीं थी। मैं तो अपने पिता की तरह डॉक्टर बनना चाहती थी। मेरी रुचि को देखते हुए पिता ने निर्णय लिया कि वे विज्ञान और गणित की पढ़ाई करने में मेरी मदद करेंगे। पर इससे मैं विश्वविद्यालय की विज्ञान विषयों की परीक्षाओं में नहीं बैठ सकी। क्योंकि विज्ञान का एक प्रायोगिक हिस्सा भी था, जिसके लिए प्रयोगशाला की ज़रूरत थी।

मैंने विज्ञान और गणित की पढ़ाई घर पर ही की। मेरे परिवार का मुझे पूरा साथ मिला। शायद वे इस बात पर काफी गर्व महसूस करते थे कि मैं इतनी 'दिमागी' चीज़ करना चाहती थी। चूँकि विज्ञान के प्रयोग खुद से करना सम्भव नहीं था, इसलिए मैंने गणित पर ध्यान केन्द्रित किया। मुझे गणित में कोई भी चीज़ समझ में आने पर बहुत खुशी होती थी - 'घरेलू' कक्षा में की गई किसी भी चीज़ की तुलना में कहीं ज़्यादा खुशी!

इसलिए डॉक्टर बनने की मेरी इच्छा अधूरी रह गई। लेकिन यहीं से गणितज्ञ बनने की राह भी खुली। अपनी सटीकता के कारण गणित मुझे हमेशा से ही पसन्द था। किसी प्रश्न को समझकर उसे हल करना मुझे बहुत अच्छा लगता था। गणित की सबसे अच्छी बात यह थी कि इसमें ज़्यादा अंक पाने के लिए पन्ने नहीं भरने पड़ते थे। और कितने अंक आएँगे यह जाँचनेवाले की सनक और पसन्दगी पर निर्भर नहीं था। मुझे बस अपने उत्तर को सही सिद्ध करने की ज़रूरत थी। इसके अलावा गणित को हमेशा ही अत्यधिक बौद्धिक गतिविधि समझा गया है। गणित पढ़ने के मेरे फैसले का मेरे पूरे परिवार ने समर्थन किया।

मैंने शासकीय महिला महाविद्यालय, लुधियाना से गणित ऑनर्स में स्नातक डिग्री हासिल की। पंजाब विश्वविद्यालय में बीए में मुझे पहला तथा गणित ऑनर्स में दूसरा स्थान मिला। गणित में एमए करने के लिए मैंने लुधियाना के शासकीय पुरुष महाविद्यालय में दाखिला लिया। वहाँ सभी शिक्षक पुरुष थे। उनमें से कुछ की राय थी कि महिलाएँ गणित की पढ़ाई नहीं कर सकतीं और उन्हें करना भी नहीं चाहिए। मैंने इसे एक चुनौती की तरह लिया।

कॉलेज के उप-प्राचार्य प्रोफेसर के. आर. चौधरी मेरी बहुत हौसलाअफज़ाई करते। जब मैंने पहले साल 98 फीसदी अंक हासिल कर पंजाब विश्वविद्यालय में पहला स्थान पाया तो उन्हें बहुत गर्व हुआ। मैं अगस्त 1962 में गणित विभाग में बतौर रिसर्च फैलो काम करने लगी।

मेरे पहले कुछ महीने बहुत मुश्किल रहे। गणित के विस्तार और उसके अनसुलझे सवालों के बोझ तले मैं दबी जा रही थी। छात्रावास के परिवेश में खुद को ढालना, फैकल्टी की अपेक्षाओं पर खरा उतरने की कोशिश और शोध करनेवाले अन्य विद्यार्थियों के साथ परस्पर संवाद रखना, मुझे बहुत मुश्किल लग रहा था। फिर भी मैंने अपना पूरा ध्यान अपने शोध कार्य पर लगाया।

एम.ए. के दौरान मैंने गणित की विभिन्न शाखाओं का अध्ययन किया। संख्या सिद्धान्त में मुझे सबसे ज़्यादा मज़ा आया। इसका एक कारण यह भी था कि मैं मशहूर गणितज्ञ रामानुजन से बहुत प्रभावित थी।

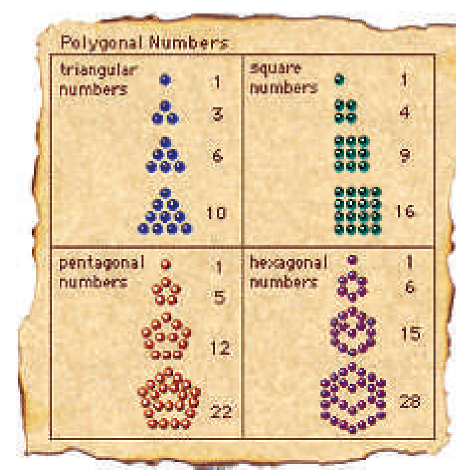

मुझे यह बात भी बहुत अच्छी लगती कि संख्या सिद्धान्त के कई सवालों को बहुत ही साधारण तरीके से व्यक्त किया जा सकता था। लेकिन इसके सवाल बहुत चुनौतीपूर्ण हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, धनात्मक पूर्ण संख्याओं और उनके गुणन की जानकारी भर होने से हम अभाज्य संख्याओं (1 से बड़ी वे संख्याएँ, जो स्वयं और 1 के अलावा अन्य किसी संख्या से विभाजित नहीं होतीं।) को पूर्ण संख्याओं की बुनियादी इकाई के रूप में परिभाषित कर सकते हैं। पर क्या अभाज्य संख्याओं की कोई निश्चित संख्या है? अगर हम बढ़ते हुए क्रम (2, 3, 5...) में अभाज्य संख्याओं की सूची बनाना शुरू करें तो यह सूची कहाँ जाकर खत्म होगी? दूसरे शब्दों में क्या कोई सबसे बड़ी अभाज्य संख्या है? यूक्लिड का एक बहुत सुन्दर प्रमाण दिखाता है कि अभाज्य संख्याएँ असीम हैं। हम देख सकते हैं कि अभाज्य संख्याओं की सूची में (3, 5) या (11, 13) या (17, 19) जैसे जोड़े हैं, जहाँ दोनों अभाज्य संख्याओं के बीच 2 का अन्तर है। इन्हें युग्म अभाज्य संख्याएँ कहते हैं। यहाँ फिर यह सवाल उठ सकता है कि क्या युग्म अभाज्य संख्याओं की कोई निश्चित संख्या है? दरअसल युग्म अभाज्य संख्या संबंधित अनुमान, जो यह कहता है कि 'अभाज्य युग्मों की संख्या अनन्त है', गणित के सबसे प्रसिद्ध अनसुलझे सवालों में से एक है।

जब मैं रिसर्च फैलो के रूप में काम कर रही थी उसी समय मेरे शोध के मार्गदर्शक प्रोफेसर बम्बाह ने अमेरिका की ओहायो स्टेट यूनिवर्सिटी (ओएसयू) में जाना तय कर लिया था। उनके सभी शोधार्थियों को वहाँ फैलोशिप की पेशकश की गयी। माता-पिता मुझे अमेरिका भेजने के लिए तैयार हो गए। वहां मैंने थोड़े से वक्त में अपने कोर्स की ज़रूरतों को पूरा कर लिया और मुझे सबसे ऊँचे ग्रेड हासिल हुए। दिसम्बर 1965 में मुझे मेरी डिग्री प्राप्त हो गई। उस समय मैं ओएसयू से पीएचडी करनेवाली सबसे कम उम्र की विद्यार्थी थी।

अपनी पीएचडी के दौरान मैंने बीजगणित, गणितीय विश्लेषण, स्थान विज्ञान, मापन सिद्धान्त, बीजगणितीय संख्या सिद्धान्त, विभाजन सिद्धान्त, संख्याओं की ज्यामिति और डायोफेंटीय सन्निकटन के कोर्स पढ़े। इससे नई अवधारणाओं और विचारों से मेरा परिचय हुआ। पहले सीखी अवधारणाओं को भी इस दौरान गहराई से और विस्तार से समझ सकी। मुझे बीजगणितीय संख्या सिद्धान्त ने बहुत आकर्षित किया। लेकिन मेरा पसन्दीदा विषय बना संख्याओं की ज्यामिति। यह शाखा संख्या सिद्धान्त के कुछ खास सवालों पर ज्यामिति के नमूनों को लागू करती है। मैंने अपना कामकाजी जीवन ऐसे ही मौकों की खोजबीन करते हुए बिताया है। थोड़े-थोड़े समय के लिए ओएसयू और विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय में पढ़ाने के बाद मैंने वापस भारत आने का निर्णय लिया।

अधिकाँश लोग गणित से डरते हैं। महिला गणितज्ञ से मिलने पर तो उन्हें झटका-सा लगता है। मुझे इस पर हँसी आती थी लेकिन फिर मैंने देखा कि मेरे अपने बच्चों के मन में भी गणित का डर बैठता जा रहा था।

परिस्थितियाँ मुझे गणित की तरफ ले गईं। पर सौभाग्य से मुझे हर समय सभी का साथ मिलता रहा। मुझे गणित के सवालों पर चर्चा करने और उन पर काम करने में हमेशा ही मज़ा आया है। किसी मुश्किल प्रश्न को हल करने पर मिलने वाली खुशी को व्यक्त करना असम्भव है।

मंदाकिनी दूबे और राम रामस्वामि द्वारा संपादित, 'द गर्ल्स गाईड टु ए लाईफ इन साईन्स', ज़ुबान द्वारा प्रकाशित, पर आधारित

मेरा पन्ना

गाँव का पोखर

मेरे गाँव में दो पोखर है। उस पोखर में बहुत गन्दगी फैली रहती है। हम चाहते हैं कि उसे साफ करें लेकिन कोई साथ नहीं देता है तो फिर मैं उसे साफ नहीं करता। हमारे अगल-बगल बहुत सारी गन्दगी है तो फिर मैं उसे साफ नहीं करता क्योंकि हमारे पूरे बिहार में गन्दगी है। लेकिन हमें दीपावली अच्छा लगता है क्योंकि उस दिन सारे घर की और गाँव की और सारे टोले की सफाई होती है। हम सोचते हैं कि पूरा दिन दीपावली ही रहे। दूसरे देश के लोग कहते हैं कि एक बिहारी सौ बीमारी रखता है। हमारी देह इसलिए स्वस्थ नहीं रहती क्योंकि गन्दगी चारों ओर फैली हुई है। हम जानते हैं कि गन्दगी से बीमारी होती है। उस पर जीव होते हैं और उनसे बीमारी होती है फिर भी गन्दगी पर ध्यान नहीं देते हैं।

—प्रवीन कुमार प्रजापति, आठवीं, रुईया बंगरा, बिहार

सर्दी आई, सर्दी आई

सर्दी आई, सर्दी आई,
अपने संग झंझट ले आई।
रोज़ सुबह हम उठ न पाते,
कम्बल में सिकुड़े रह जाते।
आवाज़ न माँ की,
हम सुन पाते,
नहाने के लिए देर हो जाती।
दौड़े-दौड़े स्कूल जाते
टीचर से भी डाँट हैं खाते।
सर्दी जाओ, सर्दी जाओ
अपने पीछे गर्मी लाओ।

—उत्सवी, तीसरी, डी. पी. एस
पटना, बिहार

—सुबोध, चौथी, गणेशपुर,
उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड

कुछ लोग ऐसे भी होते है जो अपने जीवन के लिए एकदम अपरिचित या नया रास्ता अपनाते है। चकमक के आने वाले अंकों में हम ऐसे लोगों के बारे में चर्चा करेंगे। इस अंक में पेश है वलरमदि की कहानी।

वलरमदि का रास्ता

अपनी खेत में निंदाई करती हुई वलरमदि।

वलरमदि का जन्म तमिलनाडु के सेलम शहर के पास एक छोटे-से गाँव के एक बुनकर परिवार में हुआ। वलरमदि अभी पत्रकारिता में एम. ए. कर रही है। पिछले कुछ महीनों से वह सुर्खियों में है। 18 जुलाई को वहाँ की पुलिस ने उसे गिरफ्तार किया और गुण्डागर्दी के आरोप में जेल में बन्द कर दिया। 56 दिन जेल में काटकर वह अभी घर लौटी है। वह कहती है, "बाहर निकलते ही मुझे गौरी लंकेश की हत्या की खबर मिली। मझे झटका लगा, लेकिन डर नहीं। शायद मेरे साथ भी ऐसा ही होगा। लेकिन डरकर घर बैठने से क्या मिलेगा?"

लेकिन उसने गुण्डागर्दी क्या की? जब वह गिरफ्तार हुई थी तब वह कॉलेजों में पर्चे बाँट रही थी और छात्रों को समझा रही थी कि क्यों उन्हें नेडुवासल के किसानों का समर्थन करना चाहिए।

नेडुवासल का मुद्दा क्या है?

तमिलनाडु के तटीय ज़िलों में ज़मीन के नीचे खनिज तेल, गैस आदि मिलने की सम्भावना है। केन्द्र सरकार ने इसकी खोजबीन और शुरुआती खनन के लिए एक कम्पनी को ठेका दिया है। सरकार इस कम्पनी को कई गाँवों में ज़मीन उपलब्ध कराएगी ताकि वह वहाँ तेल के कुएँ खोदे और संयंत्र लगाकर जाँच करे। इसके लिए सरकार ने कई गाँववालों से उनकी ज़मीन पट्टे पर ले ली है और उसे कम्पनी को दे दिया है। शुरू में गाँववालों को समझ में नहीं आ रहा था कि मामला क्या है। लेकिन धीरे-धीरे पता चला कि इससे वहाँ की ज़मीन और पानी, दोनों खेती लायक नहीं बचेंगे। नेडुवासल के किसानों ने जब अपने पड़ोस के गाँवों की ज़मीन को बरबाद होते देखा तो अपनी ज़मीनें देने से मना कर दिया। और विरोध में प्रदर्शन करने लगे। उनका विरोध देखकर कई प्रभावित गाँवों के लोग उनके साथ खड़े होने लगे और इस परियोजना को बन्द करने की माँग करने लगे। उनका कहना था कि

इससे उनकी उपजाऊ ज़मीन बंजर हो रही है। इस आन्दोलन के समर्थन में प्रदेशभर के छात्र, बुद्धिजीवी और कलाकार जगह-जगह प्रदर्शन करने लगे। वलरमदि यही कर रही थी, जब उसे गिरफ्तार किया गया।

वलरमदि की गिरफ्तारी के बाद पूरे प्रदेश में इसका विरोध हुआ। मुख्यमंत्री ने इसका जवाब देते हुए कहा, "यह लड़की लगातार सरकार विरोधी आन्दोलन कर रही है और उस पर कई केस लगाए गए हैं। फिर भी वह बाज़ नहीं आ रही है। इसीलिए हमें यह कदम उठाना पड़ा।"

मुख्यमंत्री ने उस पर लगे पुराने केसों के बारे में कहा कि "चार साल पहले उसने अपने विश्वविद्यालय की बढ़ी फीस के विरोध में छात्रों को उकसाकर आन्दोलन किया और वहाँ के चौकीदारों को धमकाया था। इसके बाद उसने तीन जगहों पर गाँववालों को उकसाकर नेडुवासल आन्दोलन के समर्थन में रास्ता रोका। हर बार हमने उसे गिरफ्तार किया और केस लगाया। फिर भी वो नहीं मानी तो हमें उसे गुण्डागर्दी के कानून के तहत गिरफ्तार करना पड़ा।"

वलरमदि बताती है कि चार साल पहले उसके विश्वविद्यालय में दस हज़ार छात्रों ने मिलकर फीस बढ़ोत्तरी के विरोध में प्रदर्शन किया। "जब पुलिस उन्हें खदेड़ने के लिए पहुँची तो मैंने उनसे कहा कि हम दस हज़ार हैं। हम पीछे नहीं हटेंगे। आपको विश्वविद्यालय से बाहर करके रहेंगे। छात्र एक साथ नारे लगाते हुए आगे बढ़े तो पुलिस को पीछे हटना पड़ा। ... इसके दो साल बाद मुझ पर केस लगाया गया और मुझे गिरफ्तार करने पुलिस की पूरी फौज हमारे गाँव पहुँची।" उसे गिरफ्तार करके दूर के किसी जेल में दस दिन रखा गया। जब वह घर लौटी तो उसके परिवारवाले उससे बेहद नाराज़ थे। लेकिन धीरे-धीरे वे समझ गए कि वह गरीबों के हित में लड़ रही है। अब वे उसका पूरा समर्थन करते हैं और उस पर गर्व भी करते हैं।

वलरमदि अपने गाँव के बच्चों के साथ खेलती है। उन्हें पढ़ाती भी है। लेकिन स्कूल के पाठ नहीं बल्कि सामाजिक न्याय, विकास की सही नीति, आजकल हमारे जल, जंगल और ज़मीन के साथ क्या हो रहा है और भविष्य में इसके क्या नतीजे होंगे? इन पर वह बात करती है, ताकि अगली पीढ़ी इन बातों को लेकर सचेत रहे। उसका कहना है कि इन बातों को समझानेवाले नेता अब काफी बुज़ुर्ग हो गए हैं। अब नए और युवा आन्दोलनकारियों की ज़रूरत है।

बुनकर दादी के साथ फोटो

ढपली लेकर रेलगाड़ियों में प्रचार करती वलरमदि - नेडुवासल को बचाएँगे, प्रकृति को बचाएँगे!!

आप वलरमदि के काम के बारे में क्या सोचते हैं? क्या उसने सही रास्ता चुना है? क्या छात्रों का आन्दोलनों में पड़ना सही है? अगर हाँ, तो किस तरह की बातों को लेकर उन्हें आन्दोलन करने चाहिए, किन को लेकर नहीं? आन्दोलन कैसे करना चाहिए? जैसे वलरमदि कर रही है या किसी और तरीके से? इन बातों पर अपनी राय लिखकर हमें ज़रूर भेजें।

(आनन्द विकटन पत्रिका में प्रकाशित तमिलप्रभा की लेख की प्रस्तुति। फोटो - धनशेखर)

बच्चों की एक मुट्ठी में आ सकने वाले दो छोटे पत्थरों को सयाने बाबा काँवर में ढोते हुए

विनोद कुमार शुक्ल

चित्र : एस. प्रशान्त सोनी

बच्चों ने एक दिन एक बहुत सयाने आदमी को सड़क पर देखा। वह व्यक्ति एक काँवर ढोकर जा रहा था। टोकनी बाँस की थी। पर, सयाने आदमी को देखकर लग रहा था कि वह बहुत वज़न उठाकर चल रहा है। वह थका हुआ था जैसे बहुत दूर से आ रहा है। और उसे बहुत दूर जल्दी पहुँचना भी है। परन्तु बाँस की टोकनी खाली दिख रही थी। क्या वह हलके काँवर को उठा नहीं पा रहा है? क्या वह बुढ़ापे की वजह से कमज़ोर है? परन्तु, उसकी चाल में तेज़ी थी। अपनी चाल को श्रम के गीत में ढालकर वह गुनगुनाता जा रहा था।

सबसे छोटा पत्थर
जो सबसे भारी भी हो
ढूँढ-ढूँढकर पहुँचाना मेरा काम है! है!! हइया
यह काम खतम कर भइया

फिर उससे छोटा पत्थर
जो उससे भी भारी हो
पहुँचाना है
काम खतम करना है
है!! हइया

फिर उससे भी छोटा
उससे भी छोटा फिर
फिर उससे भी
उससे भी फिर
ऐसा काम जो कभी खतम नहीं होता
लगता हो
उस काम को खतम करना है
है!! हइया।

बच्चों को काँवर में झाँकने के लिए सयाने बाबा के साथ दौड़ना पड़ा था। बच्चों ने आश्चर्य से देखा। एक तो बच्चों के हिस्से में ही सबसे अधिक आश्चर्य होता है। और इतना होता है कि जब बड़े होते हैं तो बिना कुछ आश्चर्य की सच्चाई होती है।

काँवर की टोकनी में छोटे-छोटे बस एक-एक पत्थर थे। पत्थर इतने छोटे थे कि उनकी एक छोटी मुट्ठी में एक साथ दोनों पत्थर आ जाते।

साथ चलते बच्चों ने कहा, "सयाने बाबा, आप थक गए होंगे। इस काँवर को हमें दे दें। हम मिल-जुलकर आप जहाँ कहेंगे, काँवर को पहुँचा देंगे।" बच्चों को लग रहा था इतने छोटे-छोटे पत्थर जेब में डालकर दौड़ते-दौड़ते जहाँ पहुँचाना होगा, पहुँचा देंगे।

और बाबा मुस्कराते हुए चलते चले जा रहे थे। बच्चे फिर कहते, विनय करते कि बाबा हमारी बात सुन लें। आप बहुत तेज़ चलते हैं।

"चलते-चलते तुम्हारी बात तो सुन रहा हूँ। बोलू तुम बोलते चलो, सब सुनते चलेंगे।"

बोलू ने कहा, "बाबा हम लोग किसी ऐसे शिल्पकार को ढूँढ रहे हैं जो परतदार कागज़ जैसी चट्टानों को जानता हो। हम उसमें शिलालेख की पेंसिल से लिखेंगे। हमारे पास ऐसी पेंसिल है जिससे शिला में लिखा जा सकता है। अगर कागज़ की तरह पत्थर हो तो कितना अच्छा होता! भारी पत्थरों को हम कागज़ की तरह पलट नहीं सकते। कभी न मिटनेवाली स्याही से हमेशा की सच्चाई लिख सकते हैं। कागज़ की तरह पत्थर हो तो भार कम होगा।"

सयाने ने कहा, "सच्चाई तो सच्चाई रहती है। और हमेशा रहती है। चाहे उसे लिखो या न लिखो। जहाँ शिला है वहाँ जाकर लिखो, यदि लिखना चाहते हो। शिला को कॉपी की तरह क्यों ले जाना चाहते हो। सारी शिक्षा बस्ते के अन्दर ही भरी नहीं होती। असली शिक्षा बाहर होती है। बाहर बहुत हलका है। मन भी हलका हो जाता है। बाहर का कोई वज़न नहीं होता। घर से खाली हाथ निकल जाओ। बाहर से सीखने का कोई बस्ता नहीं होता। सीखना निज की स्वतंत्रता है। और यह सीखना अनन्त अथाह है। इसकी सीमा चारदीवारी नहीं होती। फिर भी मैं तुम्हें उसका पता बता सकता हूँ। उसका पता है कि तुम मेरे साथ चलो। मैं वहीं जा रहा हूँ। शायद कुछ तुम्हारा काम हो जाए।"

बोलू ने चलते-चलते सयाने बाबा से कहा, "बाबा, अपना बोझ हमें दे दीजिए।"

"वैसे अपना बोझ खुद उठाना चाहिए। परन्तु दूसरों की सहायता करना अच्छी बात है।" यह कहते-कहते उन्होंने भैरा की तरफ भी देखा।

"तुम्हारा नाम भैरा है न!" सयाने बाबा ने कहा।

"हाँ!" भैरा ने कहा। और तब उसने अपनी टोपी को ठीक भी किया।

"तुम काँवर उठाओगे?" बाबा ने पूछा।

"हाँ-हाँ।" भैरा ने कहा।

सब रुक गए थे। बाबा ने अँगड़ाई-सी ली कि आराम मिल जाए।

भैरा ने झुककर काँवर को कँधे पर रखा। और खड़ा होने लगा। वह लड़खड़ा गया। काँवर लेकर खड़ा होने की उसने फिर कोशिश की। वह कँधा उठा ही नहीं पा रहा था। वह हार गया। बीच-बीच में बाबा कहते थे, "भैरा सम्भल कर!"

बोलू ने दाहिने हाथ से फेंका दाहिने हाथ का पत्थर और बाएँ हाथ के पत्थर को बाएँ हाथ से

तब बोलू गुमसुम-सा दिख रहा था। वह झुका और एक टोकनी का पत्थर उठाया। अब उसकी नन्ही मुट्ठी में वह पत्थर था। पत्थर बर्फ की तरह बहुत ठण्डा था। परन्तु, पत्थर के स्पर्श से बोलू का शरीर गरम हो रहा था। दूसरी टोकनी से उसने दूसरा पत्थर उठाया। उसकी दोनों मुट्ठियों में दोनों पत्थर थे।

सयाने बाबा ने कहा, "बोलू, यह तुमने ठीक किया। मुझे देर हो गई है। अब मेरी बात ध्यान से सुनो। दोनों पत्थरों को तुम उस दूर पहाड़ी की तरफ, तब फेंकना जब मैं तुमसे कहूँगा। और पत्थर फेंकते ही तुम्हें उन पत्थरों का पीछा करना

है। उनके गिरने के पहले हवा में पत्थरों को तुम्हें झेल लेना है। हम तुम्हारे साथ दौड़ेंगे।”

यह सुनकर भैरा ने टोपी सिर से निकालकर पेंट की जेब के अन्दर रख ली। दौड़ने से गिर गई तो उठाने रुकना पड़ेगा और वह पिछड़ जाएगा। वह दौड़ने के लिए तैयार था। सब तैयार थे।

सयाने बाबा ने फिर कहा, “बोलू, पत्थर फेंकने के लिए तैयार हो जाओ। पर ध्यान रहे इतनी ज़ोर से मत फेंकना कि पहाड़ी के उस पार पत्थर चला जाए। थोड़ा अधिक ऊपर की तरफ फेंक सकते हो। ताकि उसके नीचे आने के पहले तुम पहुँच जाओ।”

बोलू अब सबसे आगे, पत्थर फेंकने के लिए तैयार था। साथ दौड़ने के लिए भी सब तैयार थे।

बाबा ने कहा, “फेंको पत्थर।”

बोलू के जिस हाथ में जो पत्थर था उसी हाथ से पत्थर को फेंका। दाहिने हाथ के पत्थर को पहले। फिर बाएँ हाथ के पत्थर को। पत्थर फेंकते ही बुदबुदाते हुए वह दौड़ पड़ा था। वह इस तरह झटके से उछलकर दौड़ पड़ा जैसे उसने अपने को भी हवा में पत्थरों के पीछे फेंक दिया हो।

बोलू के दौड़ने की एक झलक भर दिखी थी कि वह दौड़ा और दूर चला गया। बाबा उसके साथ थे। वे बराबर साथ दौड़ रहे थे। फिर भी लग रहा था कि वे धीरे दौड़ रहे हैं। और बोलू तेज़। बाबा अगर तेज़ दौड़े तो लगता कि बोलू से वे आगे निकल जाएँगे। बोलू के कदम छोटे थे। बाबा बड़े कदमों से दौड़ रहे थे, हलके कदम रखते हुए।

वहाँ घने जंगल के बीच पलक झपकानेवाले बाबा और भी तेज़ पलक झपकते यह दौड़ देख रहे थे।

देखू अपनी दृष्टि की पहुँच के बराबर एक कदम में पहुँच जाना चाहता था

देखू सोचता है, जितनी दूर वह देखता है वहाँ तक एक कदम में पहुँच जाए। पर वह बोलू को आगे और आगे जाता हुआ देख रहा था। फिर उसे लगा कि बोलू उसके देख सकने की दूरी से भी आगे चला गया है। और वह फिर बोलू को नहीं देख पा रहा था।

आकाश में फेंके गए पत्थर की तरफ किसी का ध्यान नहीं था। यदि उन पत्थरों की तरफ किसी का भी ध्यान जाता और उनको देखने की कोशिश करता तो दृष्टि अपने आप दूरबीनवाली दृष्टि हो जाती। तब साफ दिखाई देता कि नन्हे पत्थर आकाश में फेंकने की ताकत के बँधे धागे से पतंग की तरह दूर जा रहे हैं।

दाहिने हाथ का पत्थर पहले फेंका गया था। बाएँ हाथ का बाद में। दूर जाते समय उनमें हाथ भर की दूरी होगी। दाहिने हाथ का पत्थर बस एक हाथ आगे था। देखते-देखते ऐसा लगने लगा कि दोनों पत्थरों में दौड़ हो रही है कि कौन आगे जाता है। बाएँ हाथ का पत्थर तेज़ी से आगे बढ़ता लग रहा है। और दोनों पत्थरों की दूरी धीरे-धीरे कम हो रही है। फिर लगा कि वे करीब-करीब बराबर हो गए। बराबर होते बाएँ हाथ से फेंका हुआ पत्थर आगे हो गया। जो ऊपर देखता उसकी दृष्टि दूरबीन की हो गई थी। देखा देखी बहुत से लोग उसी ओर देखते हुए जगह-जगह खड़े हो गए थे। वे यह सब ऐसे देख रहे थे जैसे दो उड़ान की दौड़ है। एक आगे होता है तो दूसरा भी आगे निकल जाने दिखने लगता है।

बोलू और बाबा पत्थरों की दौड़ से आगे थे। वे दोनों, पहाड़ी के नीचे एक झोपड़ी तक पहुँचे। वहाँ दोनों खड़े हो गए।

बाबा ने कहा, "बोलू, तुमको प्यास लगी हो तो झोपड़ी में, कलश में पानी भरा रखा है। तुम पानी पी लो। पत्थरों को पहुँचने में कुछ देर है। हम बहुत पहले पहुँच गए हैं।"

यह झोपड़ी पहाड़ी के पास थी। यहीं पत्थर को गिरना था।

बोलू ने पूछा, "बाबा, आपके लिए पानी ले आऊँ?"

"नहीं! मुझे प्यास नहीं लगी है।" बाबा ने कहा।

उड़ान की दौड़ में आगे पीछे होते दोनों पत्थर गिरे एक साथ

बाबा आकाश की तरफ पत्थरों के पहुँचने की राह देख रहे थे। बोलू भी पत्थरों को झेलने के लिए तैयार था। तभी पत्थर उनको आते दिखे। किस जगह गिर सकते हैं यह अनुमान बोलू आकाश की तरफ देखता हुआ कभी इधर-कभी उधर हो रहा था। अचानक वह खड़ा हो गया। परन्तु, जब दोनों पत्थर गिरने को हुए तो गिरते हुए दोनों पत्थर साथ हो गए। दोनों साथ गिर रहे थे। साथ गिरते पत्थरों को बोलू ने दोनों हाथ उठाकर झेल लिया। बाएँ हाथ से फेंके गए पत्थर को बाएँ हाथ से ही झेला और दाहिने हाथ से फेंके पत्थर को दाहिने हाथ से।

बाबा, बोलू से पत्थरों को झेलने के पहले यह बताना चाहते थे कि पत्थरों को सावधानी से झेलना। अगर ये पत्थर ज़मीन पर गिर पड़े तो बहुत गहरे धँस जाएँगे। परन्तु बोलू ने अपनी कोमल हथेलियों में झेलकर मुट्ठी को बन्द कर लिया था। अभी पत्थर गरम लग रहे थे।

जो पीछे दौड़ते आ रहे थे बहुत पीछे थे। पर दूर से सब ने बोलू को पत्थर झेलते हुए देखा था। उन्होंने यह भी देखा था कि दोनों अब झोपड़ी के अन्दर जा रहे हैं।

यह झोपड़ी घास-फूस की झोपड़ी जैसी लगती थी। पर यह पत्थर हो चुकी झोपड़ी थी। ऊपर घास की छप्पर पत्थर की थी। मिट्टी की दीवाल जैसी लगती दीवाल पत्थर की थी। दरवाज़े भी पत्थर के थे। हमेशा खुले दरवाज़े की तरह पत्थर का दरवाज़ा था। छप्पर पर घास के रंग-बिरंगे छोटे-छोटे फूल पत्थर के फूल थे। एक बड़ा सफेद फूल नीचे तक लटका हुआ था। उस पर ओस की बूँद दिख रही थी। यह सब पत्थर का था।

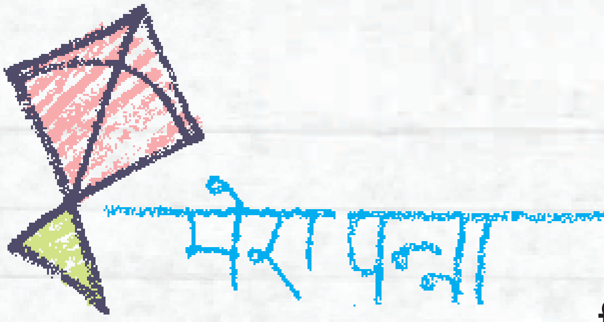

चिड़ियाँ

जब खेतों में गेहूँ लगते हैं तब बहुत-सी चिड़ियाँ खेतों में उतरने लगती हैं और गेहूँ को खाने लगती हैं। उसी समय मेरा छोटा भाई खेतों में चिड़ियों को भगाने जाता था। वह कितना भी चिड़ियों को भगाता लेकिन वह दुबारा चली आतीं। मेरा भाई बहुत परेशान रहता। एक दिन उसने खेत के बीचोंबीच बहुत सारा गेहूँ डाल दिया और जाल बिछा दिया और फिर छिपकर देखने लगा। फिर बहुत सारी चिड़ियाँ आईं और जाल के ऊपर बैठ गईं। और वह गेहूँ खाने लगीं। तभी मेरे भाई ने ढेला मारा। बहुत-सी चिड़ियाँ तो उड़ गईं लेकिन तीन चिड़ियाँ जाल में छटपटाने लगीं। और मेरा भाई चिड़ियों को जाल से निकालकर घर ले आया। जब उसके हाथों में मैंने चिड़ियों को चूँ-चूँ करते और छटपटाते हुए देखा तो मुझे बहुत गुस्सा आई क्योंकि दो चिड़ियाँ बहुत छोटी थीं और उन दोनों में से एक थोड़ी बड़ी थी। मैंने अपने भाई से कहा कि चिड़ियों को उड़ा दो लेकिन वह बोला नहीं दीदी मैं इनके पैरों को रस्सी में बाँधकर उड़ाऊँगा। मैंने अपने भाई को चिड़ियों को उड़ाने के लिए बहुत कहा लेकिन वह नहीं माना। अब मैं चुप हो गई और देखती रही। मेरा भाई चिड़ियों के पैरों में रस्सी बाँधकर उड़ाने लगा। तभी बहुत-सी चिड़ियाँ हमारे घर के सामने आकर चूँ-चूँ करने लगीं। तब मेरे भाई ने चिड़ियों को घर के अन्दर छुपा दिया और फिर बाकी चिड़ियाँ भी वापिस चली गईं। फिर मेरा भाई दुबारा चिड़ियों को उड़ाने लगा तो दुबारा वह चिड़ियाँ आकर बोलने लगीं। फिर मैंने गुस्से में आकर एक चिड़िया उड़ा दी तो मेरा भाई रोने लगा। और उसने दोनों चिड़ियों को लाल रंग से रंग दिया और फिर उड़ाने लगा। और जब थक गया तो दोनों को बाँधकर खाना खाने लगा। इसी तरह करते-करते शाम हो गई। और वह चिड़ियों को दाना खिलाकर सोने चला गया। इसी तरह करते-करते चार-पाँच दिन बीत गए। और दोनों चिड़ियों की माँ हमारे घर के चारों तरफ रोज़ चक्कर लगाती रहती थीं। एक दिन मेरा भाई अपने दोस्तों के साथ खेलने चला गया। और मैंने चिड़ियों को खोल दिया और वो उड़ गईं। फिर जब मेरा भाई घर आया तो चिड़ियों को ना देखकर रोने लगा। मैंने उससे कहा मत रो। मैंने उसे समझाया कि आखिर वह भी पक्षी हैं। उन्हें हमें बाँधकर नहीं रखना चाहिए।

—सपना कुमारी, आठवीं,
रा. प्रा. विद्यालय खिलाड़िया,
उधमसिंह नगर, उत्तराखण्ड

—मोहम्मद शाहिद आलम,
बाल भवन किलकारी
पटना, बिहार

चित्र पहेली
बाएँ से दाएँ
ऊपर से नीचे
Day
2
2017
E
52

RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म.प्र. / भोपाल / 261 / 2015-17

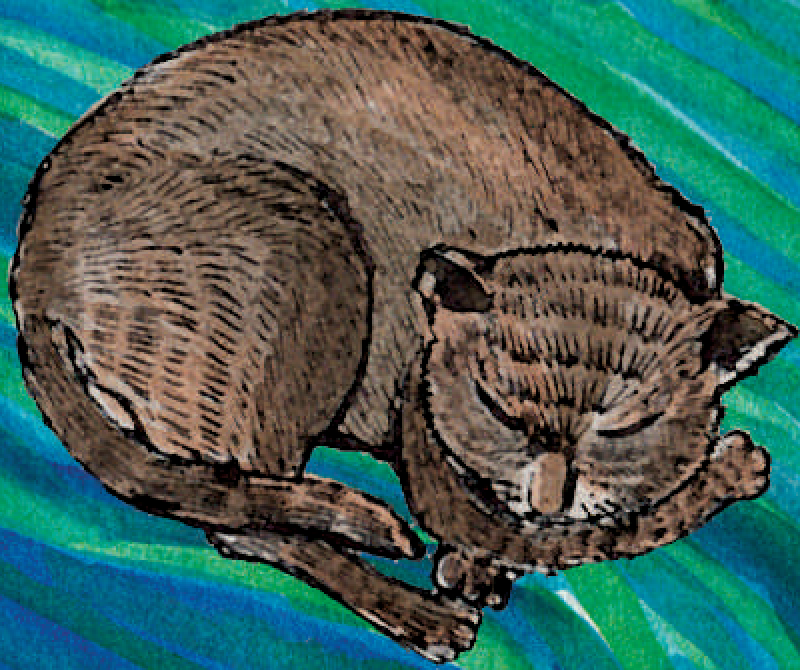

कुछ ही महीनों मे गोपी बड़ी हो गई थी। उसका एक मेल साथी भी था। वो भी बहुत ही प्यारा था। एक दिन एक कुत्ते ने उसके साथी को मार डाला। तब गोपी बहुत ही दुखी हो गई थी। दो-तीन दिनों तक वो ज़ोर-ज़ोर से रोती रही। बदलाव के लिए हम उसे कुछ दिनों के लिए वथर निम्बलकर ले आए। धीरे-धीरे गोपी अपने साथी को भूल गई। फिर हम उसे वापिस लालगुन ले आए।

दीवाली की छुट्टियों में गोपी ने तीन बच्चे दिए। वो बहुत ही सुन्दर थे। हम सब बहुत खुश हुए। एक हफ्ते बाद उन बच्चों ने अपनी आँखें खोलीं। और कुछ ही दिनों में वो पूरे घर में खेलने लगे। गोपी अपने बच्चों का बहुत अच्छे से ख्याल रखती थी।

एक दिन मैं और मेरे बाबा आम के पौधे खरीदने बारामती गए थे। हम बारामती पहुँचे ही थे कि आई का फोन आया कि गोपी ने कोई कीड़ा खा लिया है जिसके बाद वो बेहोश हो गई है। मुझे बहुत बुरा लगा। पौधे खरीदने में मेरा बिलकुल भी मन नहीं लगा। दो घण्टे बाद जब हम घर पहुँचे तो मैं दौड़कर गोपी को देखने गया। वो मर चुकी थी। उसके बच्चे उसके पास ही बैठे थे। हम सब उस दिन बहुत रोए।

हमने उसे खेत में दफना दिया। उसके एक बच्चे को हमने उसकी यादगार के तौर पर अपने पास ही रख लिया। हमने उसका नाम भी गोपी ही रखा। पर मैं उस गोपी को कभी नहीं भूल सकता।

निरंजन ढोक
सातवीं, प्रगत शिक्षण संस्थान
फलटण, महाराष्ट्र

प्रकाशक एवं मुद्रक अरविन्द सरदाना द्वारा स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो के लिए एकलव्य, ई-10, शंकर नगर, 61/2 बस स्टॉप के पास, भोपाल 462016, म.प्र. से प्रकाशित एवं आर. के. सिक्युप्रिन्ट प्रा. लि. प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इंडस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोनः 0755 - 2687589) से मुद्रित।
सम्पादकः सुशील शुक्ल